गंगा-पुस्तकमाला का ६१वाँ पुष्प

पाली-प्रबोध

लेखक

पं० आद्यादत्त ठाकुर एम्० ए०, काव्यतीर्थ

[पाली, प्राकृत और संस्कृत के अध्यापक,
भूतपूर्व, लखनऊ-विश्वविद्यालय]

—:०:—

मिलने का पता—

गंगा-ग्रंथागार

३६, गौतम बुद्ध-मार्ग

लखनऊ

द्वितीय संस्करण] सं० २००६ वि० [[illegible]]

प्रकाशक
श्रीदुलारेलाल
अध्यक्ष गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय
लखनऊ

अन्य प्राप्ति-स्थान—

१. भारती-भाषा-भवन, ३८१०, चर्खेवालाँ, दिल्ली
२. राष्ट्रीय प्रकाशन-मंडल, मछुआ-टोली, पटना
३. प्रयाग-ग्रंथागार, ४०, क्रास्थवेट रोड, प्रयाग

नोट—इनके अलावा हमारी सब पुस्तकें हिंदुस्थान-भर के प्रधान बुकसेलरों के यहाँ मिलती हैं। जिन बुकसेलरों के यहाँ न मिलें, उनका नाम-पता हमें लिखें।

मुद्रक
श्रीदुलारेलाल
अध्यक्ष गंगा-फाइनआर्ट-प्रेस
लखनऊ

वक्तव्य

भारतवर्ष में 'पाली' के पठन-पाठन का पुनरुद्धार हो रहा है। विश्वविद्यालयों की परीक्षाओं में तो 'पाली' पाठ्य विषयों में से है ही; कलकत्ता-संस्कृत-बोर्ड की उच्चतम परीक्षाओं में भी 'पाली' प्रविष्ट हो चुकी है। यह संतोष की बात है। परंतु पाली-साहित्य की पुस्तकें देवनागरी-अक्षरों में अभी तक नहीं के बराबर हैं। व्याकरण पर तो नागरी-अक्षरों में अथवा हिंदी-भाषा में कोई पुस्तक है ही नहीं। पं० विधुशेखर भट्टाचार्यजी ने अपने पाली व्याकरण में उदाहरण अवश्य नागराक्षर में दिए हैं, परंतु नियम और लक्षण आदि की भाषा बँगला है, और अक्षर भी बँगला, जिससे बँगला न जाननेवाले छात्र उससे यथार्थ लाभ नहीं उठा सकते। हिंदी में इस अभाव की पूर्ति करने के लिये मेरे माननीय मित्र पंडित बदरीनाथजी भट्ट तथा सुहृद्वर श्रीयुत दुलारेलालजी भार्गव ने मुझसे आग्रह किया, परंतु अपनी अल्पज्ञता के कारण इतने बड़े महत्त्व-पूर्ण कार्य में प्रवृत्त होने का मुझे साहस न हुआ। मुझे आशा थी कि और योग्यतर विद्वान् इस अभाव की पूर्ति करने में अवश्य ही अग्रसर होंगे। परंतु मेरी आशा पूर्ण नहीं हुई और अंत में मुझे ही यथाकथञ्चित् इसका संपादन करना पड़ा। व्याकरण में नए उदाहरण और नियम निकालना यथार्थ मौलिकता है, इसके लिये न मुझे अवकाश था और न साधन। मेरे लिये प्रधान पथ-प्रदर्शक हैं श्रीयुत विधुशेखर भट्टाचार्यजी। इनके पाली-प्रकाश ने मेरा मार्ग अत्यन्त सरल कर दिया, और अधिकतर नियम और उदाहरण उसी में से लिए गए हैं। दूसरे

लिये श्रीयुत भट्टाचार्यजी का मैं विशेषत: ऋणी हूँ। किसी-किसी प्रकरण में म्यूलर और डुरोसील का क्रम मुझे कुछ अच्छा प्रतीत हुआ, वह उनकी पुस्तकों मे से लिया गया है, और इस तरह इन तीनो पुस्तकों के आधार पर यह पुस्तक तैयार हुई है। सन्दिग्ध स्थलों में जर्मन-विद्वान् विंटरनिज़ के पाली व्याकरण से साहाय्य मिला, और इसके लिये मेरे माननीय अध्यक्ष श्रीयुत सुब्रह्मण्य अय्यर महोदय धन्यवाद-भाजन हैं, जिन्होने कृपा करके जर्मन-पुस्तक में देखकर मेरे सन्देहों का निराकरण किया।

आद्य,दत्त ठाकुर

वक्तव्य

[द्वितीय संस्करण पर]

इस सस्करण में प्रस्तावना रूप से कतिपय ज्ञातव्य विषयों का समावेश कर दिया गया है। मूल ग्रन्थ मे कोई विशेष परिवर्तन नहीं है। अनेक विश्वविद्यालयों ने उसे पाठ्य पुस्तक रूप से नियत करने का औदार्य दिखाया है, यह हर्ष की बात है।

लखनऊ
११ अगस्त, १९५२ ई०

आद्यादत्त ठाकुर

प्रस्तावना

पाली-भाषा के संबंध में विद्वज्जनों में अत्यंत मतभेद दृष्टिगोचर होता है। पंडित वटुकनाथ शर्मा साहित्योपाध्याय 'पालिजातकावलि' की प्रस्तावना में अनेक मतों का विवेचन करके अंत में लिखते हैं—"यहाँ पर विवाद-ग्रस्त विषय का उत्थान करना व्यर्थ है। इतना ही ध्यान देने योग्य है—पाली नाम की भाषा है। इसी भाषा में बौद्धों के मूल धर्म-ग्रंथ लिखे हुए प्राप्त होते हैं। इस भाषा ने लोक अथवा जनपद के नाम से अपना नामकरण नहीं प्राप्त किया है। पालि शब्द पहले मूल ग्रंथ के अर्थ में प्रयुक्त हुआ, उसके बाद काल-क्रम से मूल ग्रंथ की भाषा को द्योतित करने लगा।" इससे पूर्व यह लिखते हैं—"निस्संदेह यह उस समय में मगध में उपयुक्त होनेवाली कोई भाषा है। भगवान् बुद्ध 'मागध' थे। मगध देश में उनका जन्म था, यह सर्वत्र विश्रुत ही है। यही उनकी भाषा मागधी थी। परंतु यह मागधी, प्राकृत व्याकरणों में जिसका उल्लेख है, वह मागधी नहीं हो सकती, क्योंकि यह अर्वाचीन है, और वह अति प्राचीन। दोनों का भेद बताने के लिये बुद्ध प्रयुक्त मागधी को बौद्धमागधी कहा जाता है। यही बौद्धमागधी मूल ग्रंथ की भाषा होने के कारण बाद में पाली नाम से प्रसिद्ध हो गई।"

मूलग्रंथवाचक पाली शब्द भाषा के लिये कैसे प्रयुक्त होने लगा, यह ठीक तौर से नहीं कहा जा सकता। शर्माजी का अनुमान है कि काल-क्रम से बौद्ध वचन विस्मृति-पथ में आने लगे, तब बौद्ध उनके सुरक्षित रखने की ओर ध्यान देने लगे, और मूल ग्रंथ के अर्थ और उसकी भाषा दोनों को द्योतित करने के लिये 'पालि' शब्द का व्यवहार करने लगे।

भाषा-विज्ञान के प्रकांड पंडित श्रीयुत सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या का मत इससे भिन्न है। इनका कथन है—"बुद्ध देव के समय तक पूर्वीय भाषा

वैदिक तथा लौकिक दोनो से ही भिन्न रूप में विकसित हो चुकी थी; और यह एक स्वतंत्र भाषा समझी जाने लगी थी। जब भगवान् बुद्ध तथा महावीर ने अपना दार्शनिक आंदोलन—वैदिक बलिप्रदान आदि प्रथा के प्रतिकूल—छेड़ा, तो उन्होंने संस्कृत का आश्रय नहीं लिया। वे एक ऐसी भाषा का आश्रय लेना चाहते थे, जिसमे उनके विचार जनसाधारण तक पहुँच सकें। अतएव उन्होंने आर्यभाषा के इस पूर्वीय रूप को पकड़ा, जो उस समय पूर्व-उत्तर-प्रदेश तथा बिहार में प्रचलित था। भगवान् बुद्ध तथा महावीर ने जब अपना उपदेश उस पूर्वीय भाषा में (Eastern dialect) दिया था, तब इसे साहित्यिक रूप प्राप्त हो चुका था। पाली से पूर्व की भाषा के संबंध में यह मत लेवी, ल्युडर्स आदि विद्वानों का है। इसके बाद पाली का समय आता है। मध्यकालीन आर्य-भाषाओं की तीन अवस्थाएँ हैं, जिनमें पाली, प्राकृत तथा अपभ्रंश हैं। पाली के विषय में विद्वज्जनों की यह धारणा है कि यह मगध की प्राचीन भाषा नहीं है, प्रत्युत इसका संबध यथार्थ मे मध्य-देश की भाषा से है। विद्वान् लोग पाली को पश्चिमी हिंदी की पूर्वजा के रूप मे मानते हैं। प्रथम में बुद्ध भगवान् के उपदेश पूर्वीय भाषा मे ही थे, बाद मे वे पाली भाषा में परिणत किए गए। बुद्ध के समय तथा मौर्य राजाओं के काल में पाटलिपुत्र में इस पूर्वीय भाषा की अधिक उन्नति हुई। इसके बाद पाली भाषा का विकास हुआ, और यह विकास पश्चिमी हिंदी के क्षेत्र मे ही हुआ। ईसवीय पाँचवीं शताब्दी तक पाली का वह स्वच्छंद रूप पूर्ववत् नहीं रह गया, इसमे कृत्रिमता आने लगी, और इस पर संस्कृत का प्रभाव बढ़ने लगा। इस समय यह भारतवर्ष, सिंहल, बर्मा तथा श्याम की कृत्रिम साहित्यिक भाषा हो गई। साधारण जनता से इसका संपर्क घटने लगा, अतः इसका ह्रास होना स्वाभाविक था।

सीलोन के श्रीयुत ए० पी० बुद्धदत्त थेरा ने अँगरेजी में पाली का

व्याकरण लिखा है। इस ग्रंथ का नाम है—'The new Pali Course'. इसकी भूमिका में यह लिखते हैं—

"Pali is the language in which the oldest Buddhist texts were composed. It originated in the ancient country of magadha which was the Kingdom of Emperor Asoka and the centre of Buddhist learning during many centuries Pali is older than classical Sanskrit .. "

पाली को लौकिक संस्कृत से प्राचीन मानना कोरी कल्पना-मात्र है। इसमें संदेह नहीं कि पाली में कुछ अंश वैदिक संस्कृत से साक्षात् रूप से आए हुए पाए जाते हैं, परन्तु इतने से ही इसे लौकिक संस्कृत से भी प्राचीन मानना बोदक्षम नहीं है।

संस्कृत में वर्ण-व्यत्यय के नियम निरुक्त में दिए गए हैं, जैसे वर्णागम, वर्ण-विपर्यय, वर्ण-विकार, वर्ण-नाश आदि। इसी प्रकार आधुनिक भाषा-विज्ञान-वेत्ताओं ने वर्णों के परिवर्तन के संबंध में कुछ नियमों का उल्लेख किया है। मूल ग्रंथ में उनका यत्र कुत्र उल्लेख हुआ है, अतः उनके सरलतया समझने के लिये कुछ नियमों का यहाँ उल्लेख करना समीचीन होगा।

१. परस्पर विनिमय (Metathesis)

जब कई ध्वनियों का संयोग होता है, तो बहुधा उनमें स्थान-विनिमय होते देखे जाते हैं। जिन पदों में र् ह् या ल् की ध्वनि रहती है, उनमें यह विशेष रूप से देखा जाता है, जैसे—

सं० इक्षु—प्रा० उच्छू—हि० ऊख

सं० बिन्दु—हि० बूँद

२. अग्रागम या आदिस्वरागम (Prothesis)

बोलते समय आरंभ में ही कोई ऐसी ध्वनि आ जाती है या

संयुक्ताक्षर आ जाता है, जिसके उच्चारण में कठिनता मालूम देती है, तब उस शब्द के पूर्व अनजान में ही कोई स्वर—बहुधा इ—आकर सहायता कर देता है। जैसे—

संस्कृत	पाली
ऋणम्	इण
ऋषि	इसि
शृंग	सिंग

३. स्वर-भक्ति या मध्यस्वरागम (Anaptyxis)

संयुक्ताक्षरों को बोलने में विशेष प्रयत्नशील होना पड़ता है। इस असुविधा को दूर करने के लिये मन अपने आप दो संयुक्त व्यंजनों के बीच कोई छोटा-सा स्वर ला रखता है। इस प्रकार दो व्यंजनों के बीच स्वर रख देने को स्वरभक्ति कहते हैं। यह प्रवृत्ति पंजाबी भाषा-भाषी लोगों में बहुतायत से देखने को मिलती है। जैसे—

स्टेशन—सटेशन

स्कूल—सकूल

संस्कृत से प्राकृत में विकास होते समय भी इस तरह के बहुत से उदाहरण देखने को मिलते हैं। जैसे—

सं० रत्न—प्रा० रतन—हि० रतन

सं० कृष्ण—प्रा० कसण

स० स्त्री—पाली तिरया—तिरिया

४. ध्वनि-लोप या अक्षर-लोप (Haplology)

जब दो समान ध्वनियाँ या समान अक्षर पास-ही-पास आते हैं, तो प्रयत्न-लाघव के कारण अनजाने ही उनमें से एक का लोप हो जाता है। ध्वनि या अक्षर-लोप दो प्रकार का होता है—(क) स्वर-लोप एव (ख) व्यंजन-लोप।

(क) स्वर-लोप

स्वर-लोप तीन प्रकार का होता है—

(१) आदि स्वर-लोप (Apocope)

सं० अभ्यंतर—हिं० भीतर

„ अरघट्ट—हिं० रहट, (गुजराती—रेंट)

(२) मध्य-स्वर-लोप (Syncope)

मध्य-स्वर का पूर्ण लोप बहुत कम पाया जाता है, और प्रायः लिखित रूप में नहीं पाया जाता है, केवल उसका उच्चरित रूप पाया जाता है।

(३) अंत-स्वर-लोप (Aphesis)

संस्कृत	हिंदी
ऊर्णा	ऊन
गोधा	गोह
शय्या	सेज
निद्रा	नींद
जिह्वा	जीभ

(ख) व्यंजन-लोप

सं०	प्रा०	हिंदी
सुवर्णकार	सोणारो	सोनार
सपत्नी		सौत
कदली		केला
वल्क	पाली वाक	
संकल्पयति	„ संकापयति	

५. समीकरण (Assimilation)

जब दो विभिन्न ध्वनियाँ पास-पास आ जाती हैं, तो प्रयत्न-लाघव से दोनों सम हो जाती हैं। यह दो प्रकार से होता है—

(क) पुरोगामी समीकरण (Progressive assimilation)

मस्तिष्क जब एक ध्वनि पर जमा रहता है, और उसी समय आगे आनेवाली ध्वनि का आभास आ गया, तो पिछली ध्वनि ही आगे आनेवाली ध्वनि को अपने समान कर लेती है। इस प्रकार का समीकरण पुरोगामी समीकरण कहलाता है, जैसे—

सं० लग्न	प्रा० लग्ग
,, अग्नि	पाली अग्गी, अग्गि
,, नग्न	प्रा० नग्गो
,, आत्मन्	पाली अत्ता
,, सहस्र	,, सहस्सं
,, कन्या	,, कञ्ञा
,, ईश्वर	,, इस्सर

(ख) पश्चगामी समीकरण (Regressive assimilation)

जब मस्तिष्क एक ध्वनि पर आधा ही ठहरता है, और उसी समय अगर अगली ध्वनि आ धमकती है, तो अगली ध्वनि पूर्व ध्वनि को सम कर लेती है। इस प्रकार जब परवर्ती ध्वनि के समान पूर्ववर्ती ध्वनि हो जाती है, तो वह पश्चगामी समीकरण कहलाता है, जैसे—

सं०	सर्वः	पाली	सब्बो
,,	कर्म	,,	कम्म
,,	भक्त	प्रा०	भत्त—हिंदी भगत
,,	सर्प	,,	सप्प
,,	धर्म	,,	धम्म
,,	खड्ग	,,	खग्ग
,,	पुद्गल	,,	पुग्गल

६. विषमीकरण (Dissimilation)

कभी-कभी पार्श्ववर्ती सम ध्वनियों के उच्चारण में असुविधा मालूम

पड़ती है, अतएव प्रयत्न-लाघव के लिये इन्हें भिन्न कर लिया जाता है। यही विषमीकरण कहलाता है, जैसे—

सं०	पिपासा	हिंदी	प्यासा		
,,	पिपीलिका	प्रा०	किपिल्लिका		
,,	मीमासते	पाली	वीमसते		
,,	पिपासति	,,	पिवासति		
,,	प्रापनं	,,	पाउण	हिंदी	पाना
,,	काक	प्रा०	काओ	,,	काग

पालिसाहित्य

यह प्रायः सर्वसम्मत सिद्धांत है कि भगवान् बुद्ध के प्रवचन मौखिक हुआ करते थे, और उनके निर्वाण के बाद ही सर्वप्रथम उन प्रवचनों का संग्रह प्रारंभ हुआ। अतः पाली धार्मिक ग्रंथों का प्रारंभ बुद्ध-निर्वाण के बाद ही होता है। इसी प्रकार इनकी अन्तिम सीमा ईसवी प्रथम शताब्दी से अव्यवहित पूर्व सिद्ध होती है। मलिंद पण्ह ईसवीय प्रथम शतक में लिखा गया था। इसमें प्रायः उन सभी ग्रंथों का उल्लेख है, जो उससे पूर्व निश्चित हो चुके हैं। अतः ईसा से पूर्व प्रथम शतक का अंतिम भाग ही इन ग्रंथों के प्रणयन की चरम सीमा सिद्ध होती है। प्राज्ञवर विमल चरण ला ने अपने 'पालि-साहित्य' के इतिहास में इसका विशद विवेचन किया है। विशेष विज्ञप्ति के लिये उनका ग्रंथ देखना चाहिए। उनके अनुसार उन्होंने जो समय विभाग किया है, वह इस प्रकार है—प्रथम काल ४८३ से ३८३ ई० पू०; द्वितीय ३८३-२६५ ई० पू०; तृतीय २६५—२३० ई० पू०, चतुर्थ २३०-८० ई० पू० और पंचम तथा अंतिम ८०-२० ई० पू०। इस अभ्यंतर में पाली-ग्रंथों के संशोधन के संबंध में छः महासम्मेलन हुए हैं—तीन भारतवर्ष में तथा तीन सिंहल में। भारत-वर्ष में प्रथम सम्मेलन बुद्ध के निर्वाण के बाद ही अजातशत्रु के

राजत्व-काल में हुआ था। द्वितीय सम्मेलन कालाशोक (कालकीर्ण) के राजत्व-काल में तथा तृतीय सम्राट् अशोक के तत्त्वावधान में। अंतिम तीन सम्मेलन सिंहल में अशोक-सुत महेंद्र के सिंहल में बौद्ध-धर्म-प्रचार के लिये जाने के बाद भिन्न-भिन्न समय में हुए। जिनकी अंतिम सीमा ईसा से पूर्व की प्रथम शताब्दी है।

बौद्ध ग्रंथों में तीन पिटक (पिटारे) हैं, और उनके अंतर्गत प्रत्येक में भिन्न-भिन्न खंड हैं। प्रथम विनय पिटक है; द्वितीय सूत्र पिटक है। इसका पंचमखंड खुद्द निकाय है, जिसके अंतर्गत जातक कथाएँ उपलब्ध होती हैं। विनय-पिटक में बौद्ध संप्रदाय में प्रविष्ट भिक्षुओं के व्यवहार सौकर्य के लिये नियम-उपनियमों का विशेष उल्लेख है। द्वितीय सूत्र पिटक के भाग 'निकाय' नाम से अभिहित हैं—१ दीघ निकाय, २ मज्झिम निकाय, ३ संयुत्त निकाय, ४ अंगुत्तर निकाय और ५ खुद्दक निकाय। इनमें भगवान् बुद्ध के प्रवचन संगृहीत हैं। इन्हीं का दार्शनिक विवेचन तृतीय अभिधम्म-पिटक में संगृहीत है। यही पाली के मूल धर्म-ग्रंथ हैं, और ये सब ईसवीय से पूर्व स्थिर हो चुके थे। इसके बाद अनेक टीका-ग्रंथ-विवरण आदि पाली में लिखे गए हैं। बाद में संस्कृत में भी बौद्ध मत पर अनेक ग्रंथ लिखे गए हैं।

बुद्ध भगवान् के उपदेश कितने मार्मिक होते थे, इनका यथार्थ अनुभव उनके परिशीलन से प्राप्त होता है। दार्शनिक विचारों में यद्यपि सबका ऐकमत्य नहीं है, तथापि आचार-प्रकरण (शील आदि) में किसी को भी विप्रतिपत्ति नहीं है। दार्शनिक विचारों का खंडन-मंडन बहुत हुआ है, पर वास्तविक दृष्टि से उनका समन्वय हो जाता है।

लखनऊ
१५।८।१९५२

आद्यादत्त ठाकुर

विषय-सूची

पाठावली

पाली-प्रबोध

वर्ण-विभाग

वैदिक भाषा में ६४ अक्षर माने गए हैं। यह संख्या शनैः-शनैः कम होती गई। वर्तमान संस्कृत में ५० हो गई। पाली तक पहुँचते-पहुँचते वह संख्या और भी क्षीण हो गई।

स्वर—पाली में केवल आठ स्वर पाए जाते हैं। यथा—अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए और ओ।

ऋकार के स्थान में कहीं अ, कहीं इ और कहीं उ होते हैं। उदाहरणार्थ ऋ के स्थान में अ का प्रयोग—गृहं=गहं ; नृत्यं=नच्चं।

ऋ के स्थान में इ—ऋणम्=इणं; ऋषि=इसि, शृग=सिग।

ऋ के स्थान में उ—ऋतु=उतु ; ऋषभ=उसभो।

लृकार का प्रयोग तो संस्कृत में ही बहुत विरल है, पाली में तो उसका सर्वथा अभाव है।

ऐ और औ भी पाली में नहीं पाए जाते।

ऐ के स्थान में प्रायः ए मिलता है। यथा—ऐरावण=एरावणो; वैमानिक=वेमानिक, वैयाकरण=वेय्याकरण।

कहीं-कहीं ऐ के स्थान में इकार तथा ईकार देखे जाते हैं। यथा—ग्रैवेयं = गीवेय्यं ; सैंधव=सिंधवो। औ के स्थान में अधिकतर ओ देखा जाता है। यथा—

औदरिकः=ओदरिको ; दौवारिकः=दोवारिको।

कहीं-कहीं उ भी देखा जाता है। यथा—मौक्तिक=मुत्तिक ; औद्धत्यं=उद्धत्य।

व्यंजन वर्ण

पाली में शकार तथा षकार का प्रयोग नहीं पाया जाता। इनके स्थान में केवल दंत्य सकार देखा जाता है।

साधारण विशेषताएँ जो पाली में पाई जाती हैं—

(१) पाली में पद के अंत में हल् (व्यंजन) नहीं मिलता। संस्कृत में जो पद हलंत होते हैं, उनके अंत हल् का पाली में लोप हो जाता है। यथा—विद्युत्=विज्जु ; पश्चात्=पच्छा ; समतात्=समता ; गुणवान्=गुणवा।

(२) पाणिनीय व्याकरण के अनुसार पद के अंत में स्थित म् के स्थान में अनुस्वार नहीं होता, किंतु सारस्वत व्याकरण के अनुसार होता है।

पाली में अंत्य म् के स्थान में नित्य अनुस्वार होता है। यथा—

चित्तम्=चित्तं ; तीर्थम्=तित्थं।

(३) पाली में विसर्ग का प्रयोग नहीं पाया जाता। संस्कृत के अकारांत पद के अंत में जो विसर्ग होता है, उसके स्थान में पाली में ओ होता है; अन्यत्र (अकारांत पद से भिन्न स्थल में) विसर्ग का प्रायः लोप होता है। यथा—

देवः=देवो ; कः=को ; एषः=एसो; भिक्षुः=भिक्खु , अग्निः=अग्गि ; धेनुः=धेनु।

नोट—पद के मध्यस्थित विसर्ग के नियम भिन्न हैं। उनका यथा-स्थान उल्लेख होगा।

(४) पाली में रेफ का प्रयोग नहीं होता। संस्कृत के रेफ का पाली में प्रायः लोप हो जाता है और परवर्ण का प्रायः द्वित्व होता है। यथा—

कर्म=कम्मं; सर्वः=सब्बो ; निर्जलः=निज्जलो।

यदि रेफ हकार के ऊपर हो, तो दोनों के बीच में अकार आ जाता है और कहीं-कहीं इकार आ जाता है—

तर्हि=तरहि; महार्हः=महारहो ; गर्हणम्=गरहणं, बर्हि=बरिहं; बर्हीं=बरिही ।

यदि रेफ यकार पर हो, तो रेफ सहित यकार के स्थान में प्रायः रिय होता है—अथच कहीं-कहीं उसका लोप देखा जाता है ।

निर् उपसर्ग का रेफ यदि हकार पर हो, तो रेफ का लोप होता है और पूर्वस्थित नि का ह्रस्व इकार दीर्घ हो जाता है—

कार्यम्=करिय, कय्य; आर्यः=अरियं; अय्यो । पर्यंकः=परियंको ; कदर्यम=कदरिय , मार्य=भरिया, सूर्यः=सुरियो ; पर्यादानं=परियादान , पर्यायः=परियायो ।

निर्हरणम्=नीहरण; निर्हतः=नीहतो ।

पद के आदिवर्ण में स्थित रेफ का प्राय. लोप देखा जाता है । यथा—क्रीतः=कीतो ; क्रुध्यति=कुज्झति , ग्रहणम=गहण · प्रेत =पेतो ।

पद के मध्यस्थित वर्ण के साथ यदि रेफ का संयोग हो, तो रेफ का लोप होता है और जिस वर्ण में रेफ का संयोग होता है, उसे द्वित्व होता है । यथा—

प्रक्रमः=पक्कमो; समग्रः=समग्गो ।

अपवाद—

पद के मध्य अथवा अंत में एक से अधिक व्यंजन वर्ण के बाद रेफ आने से उसका केवल लोप होता है, द्वित्व कार्य नहीं होता । यथा—

इन्द्रः=इदो ; अन्त्रम=अन्तं ।

संधि प्रकरण

स्वर संधि

(१) स्वर वर्ण से पर यदि तद्भिन्न स्वर वर्ण हो, तो यहाँ-वहाँ पूर्व स्वर का लोप होता है—

यस्स+इन्द्रियाणि=यस्सिन्द्रियाणि ।

अज्ज+उपोसथो=अज्जुपोसथो ।

महा+इच्छो=महिच्छो ।
महा+आघो=महोघो ।
मे+अत्थि=मत्थि ।
उदधि+ऊमियो=उदधूमियो ।
अग्गि+आहितो=अग्गाहितो ।
भिक्खुनि+ओवादो=भिक्खुनोवादो ।
मनसि+इच्छति=मनसिच्छति ।
एसो+आवुसो=एसावुसो ।

(२) स्वर से पर तद्भिन्न स्वर आने से, कभी-कभी पर स्वर का लोप होता है । यथा—

चत्तारो+इमे=चत्तारोमे ।
चक्खु+इन्द्रियाणि=चक्खुद्रियाणि ।
ते+इमे=तेमे ।
ते+अपि=तेपि ।
सञ्ञा+इति=सञ्ञाति ।
छाया+इव=छायाव ।
अकतंञू+असि=अकतंञूसि । (अकृतज्ञोऽसि)
आकासे+इव=आकासेव ।
वसलो+इति=वसलोति ।

(३) पूर्व स्वर के लोप होने पर कभी-कभी पर स्वर (यदि ह्रस्व हो तो) दीर्घ हो जाता है—

कम्म+उपनिस्सयो=कम्मूपनिस्सयो ।
सद्धा+इध=सद्धीध । (श्रद्धेह)
अप्पस्सुतो+अयं=अप्पस्सुतायं ।
दुक्खो+अयं=दुक्खायं ।
योपि+अय=योपायं ।

सचे+अहं=सचाहं।

तदा+इपसम्मत्ति=तदूपसम्मत्ति।

(४) पर स्वर के लोप होने पर कभी-कभी पूर्व स्वर (यदि ह्रस्व हो तो) दीर्घ हो जाता है—

सु+इध=सूध (स्विह)

साधु+इति=साधूति।

लोकस्स+इति=लोकस्साति।

देव+इति=देवाति।

वि+अतिमानेति=वीतिमानेति।

किंसु+इध वित्त=किंसूध वित्त।

वि+अति सारेति=वीतिसारेति।

विज्जु+इव=विज्जूव।

निम्न स्थलों में दीर्घकार्य नहीं होता—

इति+अस्स=इतिस्स, यस्स+इदानि=यस्सदानि।

(५) अवर्ण, इवर्ण अथवा उवर्ण से पर सवर्ण स्वर आने से, संस्कृत के सदृश, दोनों मिलकर सवर्ण दीर्घ होता है—

आण+आलोकेन=आणालोकेन।

देमि+इति=देमीति।

बुद्ध+अनुस्सति=बुद्धानुस्सति।

सम्मन्ति+इध=सम्मन्तीध।

बहु+उपकारं=बहूपकारं।

(६) अकार अथवा आकार से पर इकार आने से एकार और उकार आने से ओकार होता है—

अव+इच्च=अवेच्च।

उप+इतो=उपेतो।

सुख+उदकं=सुखोदकं।

चद + उदयं=चंदोदयं ।

(७) इकार मे पर असवर्ण स्वर रहने से इकार के स्थान में प्रायः यकार होता है—

वि+आकतो=व्याकतो ।

अग्गि + आगार=अग्ग्यागार ।

अपवाद—

गच्छामि+अहं=गच्छामहं ।

ऐसी ही स्थिति मे इकार के स्थान में कभी-कभी इय् होता है—

अग्गि+आगारे=अग्गियागारे ।

पचमो+अत्थे=पंचमियत्थे ।

परि+एसना=परियेसना ।

(८) ओकार अथवा उकार से पर असवर्ण स्वर रहने से ओकार और उकार के स्थान मे कभी-कभी व होता है—

को+अत्थो=क्वत्थो ।

यो+अय=य्वाय ।

सो+अस्स=स्वास्स ।

यतो+अधिकरण=यत्वाधिकरणं ।

अथखो+अस्स=अथ ख्वस्स ।

दु+आकारो=द्वाकारो ।

वत्थु+एव=वत्थ्वेव ।

सु+आगत=स्वागतं ।

अनु+एति=अन्वेति ।

ननु+एव=नन्वेव ।

उकार से पर असवर्ण स्वर रहने से कभी-कभी उकार के स्थान में उव् होता है—

पुथु+आसने=पुथुवासने ।

(९) एकार से पर स्वर वर्ण (प्रायः अकार) रहने से कभी-कभी एकार का लोप हो जाता है, और परवर्ती ह्रस्व अकार दीर्घ हो जाता है—

मे+अयं = म्यायं; ते+अहं = त्याहं ; पब्बते+अहं=पब्बत्याहं ।

(१०) दीर्घ स्वर से पर एव होने से कभी-कभी एव के एकार के स्थान में विकल्प से 'रि' आदेश होता है, और पूर्वस्थित दीर्घ स्वर ह्रस्व हो जाता है—

यथा+एव=यथरिव, यथेव ।

तथा+एव=तथरिव, तथेव ।

कभी-कभी ह्रस्व स्वर से पर इव अथवा एव आने से उसे रेफ का आगम होता है—

विज्जु+इव=विज्जुरिव । सब्भि+एव=सब्भिरेव ।

(११) कभी-कभी केवल उच्चारण सौकर्य के लिये या कभी-कभी छन्द के अनुरोध से व्यंजन वर्ण से पूर्व स्थित ह्रस्व स्वर दीर्घ हो जाता है—

सम्म+धम्मो=सम्माधम्मो । (सम्यग्धर्मः)

मुनि+चरे=मुनीचरे ।

खति+परमं=खतीपरमं ।

जायति+सोको=जायतीसोको ।

(१२) साधारणतः इदं शब्द तथा एव शब्द पर में रहने से उच्चारण सौकर्य के लिये मध्य में यकार का आगम होता है—

मा+इदं=मयिदं ; न+इदं=नयिदं ; न+इमानि=नयिमानि ।

नव+इमे=नवयिमे ; न+एव=नयेव ।

तेसु+एव=तेसुयेव; सो+एव=सोयेव ।

(१३) कभी-कभी स्वर वर्ण पर में रहने से पूर्ववर्ती स्वर को मकार का आगम होता है—

लघु+एस्सत्ति=लघुमेस्सत्ति ।

कसा+इव=कसामिव ।

गिरि+इव=गिरिमिव ।

येन+इव=येनमिव ।

आकासे+अभि-पूजयि=आकासेमभिपूजयि ।

(१४) कभी-कभी इसी तरह दो स्वरों के बीच में उच्चारण सौकर्य के लिये नकार का आगम होता है—

चिर+आयति=चिरंनायति ।

इतो+आयति=इतोनायति ।

अविज्जा+अहोसि=अविज्जा नाहोसि ।

(१५) कभी-कभी ऐसे ही स्थलों में दकार का आगम होता है—
सम्मा+अत्थो=सम्मदत्थो ।

(१६) वृत्त के अनुरोध से तथा उच्चारण-सुविधा के लिये कभी-कभी पूर्ववर्ती अनुस्वार का लोप होता है—

एवं+अहं=एवाहं ; कथं+अहं=कथाहं ।

बुद्धानं+सासनं=बुद्धानसासनं ।

(१७) कभी-कभी अनुस्वार से पर स्थित स्वर का लोप होता है—
अभिनंदुं+इति=अभिनदुं ति ।

कतं+इति=कतं ति । (कतमिति)

किं+इति=किं ति ।

बीजं+इव=बीजं व ।

इदं+अपि=इदं पि ।

दातुं+अपि=दातुं पि ।

किं+इदानि=किंदानि ।

विकल्प से किमिति आदि प्रयोग भी उपलब्ध होते हैं ।

व्यंजन संधि

स्वरांत पद से पर हलादि पद आने से भी कभी-कभी छंद के अनुरोध से पूर्वस्थित स्वर में विकार होता है—

(१) कभी कभी व्यंजनादि पद से पूर्व स्थित दीर्घ स्वर ह्रस्व हो जाता है। यथा—

यथा + भावी + गुणेन=यथभाविगुणेन।

यिट्ठ वा हुत वा लोके+यिट्ठं व हुतं व लोके (इष्ट वा हुतं वा लोके)

(२) कभी-कभी पूर्वस्थित ह्रस्व स्वर दीर्घ हो जाता है—

एवं गामे मुनि चरे=एवं गामे मुनी चरे।

सु + रक्खं=सूरक्खं।

(३) स्वरांत पद अथवा निपात से परवर्ती व्यंजन को कभी-कभी द्वित्व होता है—

इध+पमादो=इधप्पमादो।

सु+पहितो=सुप्पहितो।

वि+पयुत्तो=विप्पयुत्तो।

अ+पतिवत्तियो=अप्पतिवत्तियो।

प + कमो=पक्कमो।

यथा+कम=यथक्कम।

वि + जोतति=विज्जोतति।

कत+ञु=कतञ्ञु।

दु+लभो=दुल्लभो।

दु+सीलो=दुस्सीलो।

नोट—इन उदाहरणों से प्रकट होगा कि पूर्व में, संस्कृत में, जो संयुक्त अक्षर थे, पाली में आकर उनमें से एक (प्रायः रेफ) का लोप हो गया था। उपसर्गादि के वश से उनमें द्वित्व होकर उनका परिमाण फिर पूर्ववत् हो गया।

यथा इध पमादो में प्रमाद (सं०) के स्थान में पमाद हुआ था। अब इध के संपर्क से पकार को द्वित्व होने से रेफ की क्षति की पूर्ति हो गई। इसी प्रकार अन्य पदों को समझना चाहिए।

उ, उप, परि, नि, दु इत्यादि उपसर्गों से पर व्यंजन को प्रायः द्वित्व होता है।

द्वित्व प्रकरण मे वकार के स्थान में बकार होता है, तथा महाप्राण (वर्गों के द्वितीय तथा चतुर्थ) अक्षरों के स्थान में उनके अल्पप्राण (प्रथम तथा तृतीय) अक्षर होते हैं—

नि+वानं=निब्बान। नि+वायति=निब्बायति।

दु+विनिच्छयो=दुब्बिनिच्छयो।

पाली शब्दों के स्वरूप और उनका संस्कृत से संबंध

पाली भाषा संस्कृत से ही निकली है, अथवा उससे स्वतंत्र है, इस विषय में विद्वज्जनों में मतभेद है। प्राचीन परिपाटी के पोषक पंडितप्रवर पाली की जननी संस्कृत को ही मानते हैं। इनके मत में जिस प्रकार अन्य प्राकृत संस्कृत से निकलीं, उसी तरह पाली भी प्राकृत के एक भेद में से है, और वह सर्वथा संस्कृत से ही प्रसूत है। इसके विपरीत कुछ आधुनिक पडितों की यह धारणा है कि संस्कृत और पाली सर्वथा स्वतंत्र हैं, उनमें जनक जन्य संबंध नहीं है। दोनों पृथक् पृथक् हैं। वे दोनो ही किसी एक साधारण स्रोत से भले ही प्रादुर्भूत हों, और इस तरह एक दूसरे की बहनें चाहे हो सकती हैं, पर जननी और जन्या का संबंध कदापि स्वीकृत नहीं हो सकता। इन दोनो मतों में से कौन कितने महत्त्व का है, इसके विवेचन का यह स्थल नहीं। जो लोग पाली को संस्कृत से निकली हुई मानते हैं, उनका संस्कृत और पाली के रूपों में भेद प्रदर्शन करना, अथच उसके साधारण नियमों का उल्लेख करना उचित ही है, परंतु जो लोग पाली और संस्कृत को सर्वथा भिन्न मानते हैं, उन्होंने भी—ज्ञानतः

अथवा अज्ञानतः, तुलनात्मक भाषा-विज्ञान की दृष्टि से ही अथवा और किसी कारण से—संस्कृत को ही मूल मानकर पाली रूपों में विकार होने के नियमों का उल्लेख किया है। प्रायः सभी पाली वैयाकरणों ने संस्कृत से पाली में परिवर्तन होने के ही नियमों का उल्लेख किया है। चाहे उनके मत में संस्कृत से पाली प्रादुर्भूत हो या न हो। यहाँ भी उसी सिद्धांत के अनुसार विवादग्रस्त विषय की विवेचना किए बिना ही, संस्कृत को मूल मानकर पाली और संस्कृत में क्या-क्या अंतर हैं, उनका साधारणतः उल्लेख किया जाता है। यहाँ यह लिख देना भी अत्यंत आवश्यक है कि संस्कृत से पाली में परिवर्तन होने के जो नियम दिए गए हैं, वे सार्वत्रिक कदापि नहीं हैं—प्रायिक हैं और उनके अपवाद रूप अनेक उदाहरण मिलते हैं; केवल सामान्य नियमों का यहाँ उल्लेख है, विवादग्रस्त नियम छोड़ दिए गए हैं।

(१) संस्कृत के ह्रस्व अकार के स्थान में भिन्न-भिन्न स्थलों में भिन्न-भिन्न प्रकार के परिवर्तन देखे जाते हैं। यथा—

(अ) कभी कभी अकार के स्थान में ए होता है। यह परवर्ती संयुक्त अक्षर के कारण होता है, यह ध्यान देने योग्य है। यथा—

एत्थ—अत्र।

उभयेत्थ—उभयत्र।

हेट्ठा—अधस्तात्।

(आ) कभी-कभी अ के स्थान में इ देखा जाता है। यथा—

तिपु—त्रपु—(सीसा)

कळिंभक—कदंब।

पिलाल—पलाल। (धान का पयाल)

तिमिस—तमस्—अंधकार।

तिमिस्सा—तमिस्रा।

(इ) कभी-कभी अ के स्थान में उ होता है, यह विशेष करके उस स्थल में देखा जाता है, जहाँ उससे पूर्व अथवा पर में (कभी-कभी कुछ दूर भी) पवर्ग का कोई अक्षर रहता है।

सम्मुंजनी, सम्मुजनी—सम्मार्जनी—झाड़ू।

निब्बुसितत्ता—निरवसितात्मा।

निमुज्जति—निमज्जति।

पुथुज्जन—पृथग्जन—साधारण श्रेणी का जन।

पण्णुवीसति—पञ्चविंशति।

पवर्ग का प्रभाव जहाँ नहीं रहता है, ऐसे स्थल भी मिलते हैं, यथा—थुनंति—स्तनंति।

अज्जुक—अर्जक।

आगु—आगस्। (अपराध)

पज्जुण्ण—पर्जन्य। (मेघ)

सज्जु—सद्यः।

उसूया—असूया।

(ई) कहीं-कहीं अ के स्थान में ओ भी मिलता है—

समोस—संमर्श।

अतो—अतर।

तिरोक्ख—तिरस्क।

(२) संस्कृत के इकार के स्थान में—

(अ) कभी-कभी अ होता है—

काकणिका—काकिणिका—कौड़ी।

पठवी—पृथिवी।

पोक्खरणी—पुष्करिणी।

घरणी—गृहिणी।

(आ) कभी-कभी ए होता है—

एत्त— इयत् । (इतना)
विहेसा—विहिंसा ।
वेहासगमन—विहायसगमन । (विहायस=आकाश)
वेमतिक—विमतिक ।
वेमज्झ—विमध्य ।
मजेट्ठा—मंजिष्ठा (मजीठ)
माता पेत्तिभर—मातापितृभरः ।
एट्ठि—इष्टि । (यज्ञ अथवा इच्छा)
(इ) कभी-कभी उ होता है—
कुक्कु—किष्कु—एक प्रकार की नाप लंबाई की ।
निच्छुभियति—निच्छुभति—निच्छूभति—निःक्षीवति ।
राजुल—राजिल ।
गेरुक—गैरिक ।
(३) ईकार के स्थान में—
(अ) अकार—भस्म—भीष्म । (भयकर)
(आ) आकार—तिरच्छान—तिरश्चीन ।
(इ) एकार—एरेति—ईरयति ।
(ई) उकार—तुम-ग्रीव ।
निट्ठुहति, निट्ठुभति—निष्ठीवति ।
(४) उकार के स्थान में—
(अ) अकार—सक्खलि—शष्कुलि ।
अगरु , अगलु—अगुरु ।
दुद्रभि—दुन्दुभि ।
वाकरा, वाकर—वागुरा । (जाल)
फल्लति—फुल्लति ।
फरति—स्फुरति ।

(आ) इ—मुदिता—मृदुता ।

सिप्पी—शुक्ति ।

(इ) कभी-कभी विशेष करके संयुक्त अक्षर मे पूर्व—ओकार होता है । यथा—

ओक्का—उल्का ।

पामोक्ख—प्रमुख्य ।

कहीं-कहीं संयुक्त अक्षर पर मे न रहने पर भी ओकार होता है—कोलज—कुंलज ।

अनोपम—अनुपम ।

(५) एकार के स्थान में—

(अ) अकार—

मिलक्ख—म्लेच्छ ।

(आ) आ—कायूर—केयूर ।

(इ) सयुक्त अक्षर मे पूर्व—इकार देखा जाता है ।

पसिब्बक—प्रसेवक । (थैली)

पटिविस्सक—प्रतिवेशक । (पड़ोसी)

उब्बिल्ल—उद्वेल ।

(ई) कहीं-कही आकार भी देखा जाता है ।

मक्तो—मत्कृते ।

अतिप्पगे—अतिप्रगे—(अत्यत सवेरे)

(६) संस्कृत के ओकार के स्थान में संयुक्त अक्षर से पूर्व ह्रस्व उकार और असयुक्त से पूर्व दीर्घ उकार होता है । यथा—

जुण्हा—ज्योत्स्ना (चाँदनी) ।

तुत्त—तोत्र (अंकुश) ।

विसूक—विशोक ।

दूभ—द्रोह ।

खज्जूपनक—खद्योतनक। (जुगनूकीड़ा)

आरुग्य (आरोग्य) यहाँ संयुक्त से पूर्व भी दीर्घ उकार है।

संयुक्त अक्षर से पूर्व यदि दीर्घ स्वर हो, तो वह प्रायः ह्रस्व हो जाता है, इसमें सिद्धांत यह माना जाता है कि ह्रस्व के बाद संयुक्त अक्षर आने से संयोगे 'गुरु' के सिद्धांत के अनुसार 'गुरु' वह रहता ही है। तब यथार्थ में, ह्रस्व हो जाने पर भी, उसके परिमाण में कोई अंतर नहीं पड़ता। प्रत्युत ह्रस्व होने से उच्चारण में कुछ गौरव हो जाता है। किंतु पुरानी लिखित पुस्तकों में यह नियम सर्वत्र नहीं देखा जाता। कहीं तो दीर्घ के स्थान में दीर्घ ही लिखा गया है, कहीं ह्रस्व कर दिया गया है। इसके ठीक विपरीत कहीं-कहीं संयुक्त से पूर्व दीर्घ स्वर को ह्रस्व न करके संयुक्त अक्षर में से ही एक का लोप कर दिया जाता है। दोनों के उदाहरण नीचे दिए जाते हैं—

अजव—आर्जवम्। कोई-कोई आजव लिखते हैं।

दब्बी—दार्वी।

कुछ लोगों का मत है कि दीर्घ स्वर वहीं रखना चाहिए, जहाँ संधि होकर दीर्घ स्वर आया हो। अन्य स्थलों में दीर्घ को ह्रस्व कर देना चाहिए। यथा—नागति—न+आगति=नागति यहाँ दो अकार की संधि के कारण दीर्घ हुआ है, इसमें ह्रस्व नहीं होना चाहिए। इसी प्रकार—पियाप्पिय में ह्रस्व न होना चाहिए। क्योंकि यह भी संधिजन्य दीर्घ है। यथा—पिय+अप्पिय=पियाप्पिय।

वर्ग के पंचम अक्षर के साथ संयोग रहने पर उसमें पूर्ववर्ती दीर्घ के स्थान में प्रायः ह्रस्व हो जाता है। यथा—

संत—शांत। दंत—दांत। वंत—वांत। परन्तु इसमें भी कहीं-कहीं व्यतिक्रम मिलता है। यथा—लागल शिख (लाङ्गलशिख) यहाँ ह्रस्व अकार होना चाहिए था।

दूसरे प्रकार के संयुक्त अक्षरों में यह नियम अत्यंत शिथिल है। कहीं दीर्घ मिलता है। यथा—अतिवाक्य—

कहीं-कहीं ह्रस्व मिलता है। यथा—सक्य, सक्क सक्यि=शाक्य। दुस्सील्य (दौःशील्य); जत्वा (ज्ञात्वा); मित्वा (मीत्वा)। कहीं-कहीं दोनो मिलते हैं—आख्यात, अक्खात, पहत्वान, पहात्वान—(प्रहाय) वल्य, वाल्य; कम्यता—काम्यता; वाह्य—वाह्य।

संयुक्त अक्षर के साथ दीर्घ स्वर की अड़चन को दूर करने के लिये जहाँ संयुक्त अक्षर में से एक का लोप हो जाता है, उसके उदाहरण ये हैं—

आजव—आर्जव।

ऊमि—ऊर्मि। कहीं-कहीं उम्मि भी मिलता है।

भाणक—भाण्डक।

भूज—भूर्ज।

अहासि—अहार्षीत्।

इसी प्रकार कहीं-कहीं ह्रस्व से पर संयुक्त अक्षर रहने पर संयुक्त अक्षर में से एक का लोप हो जाता है, और पूर्व स्थित ह्रस्व दीर्घ हो जाता है। यथा—

सजीव—सज्जीव (सद्+जीव)।

वूपकासति—व्युपकर्षति।

स्वातन—श्वस्तन। (आगामिदिन होनेवाला)

वाक—वल्क।

संकापयति—संकल्पयति।

उत् उपसर्ग के द् का प्रायः लोप होकर उकार दीर्घ हो जाता है। यथा ..ऊहसन+उत्—हसन।

ऊहजजइ—उद्धन्यते।

ऊहत+उद्धत।

इस नियम से ठीक विपरीत यह भी देखा जाता है कि कहीं-कहीं संयुक्त अक्षर से पूर्ववर्ती दीर्घ स्वर ह्रस्व हो जाता है। कभी-कभी तो संयुक्त अक्षर पर में न रहने पर भी दीर्घ स्वर ह्रस्व हो जाता है।

बहुन्न—बहूनाम्। पितुन्न—पितृणाम।

तिण्ण। पंचन्न। भुम्मि—भूमि।

मत्तिसंभव—मातृसंभव।

मातुमत्तिक—मातृमातृक।

उण्हिस्स—उष्णीष।

निड्ढ—नीड।

सुत्त—स्यूत।

जन्नु—जानु।

एकार और ओकार जब संयुक्त अक्षर से पूर्व आते हैं, तब उनका उच्चारण ह्रस्व के समान होता है। यथा सेय्या।

एकार के बाद यकार को द्वित्व होता है और एकार का उच्चारण ह्रस्व हो जाता है—सेय्यो—श्रेयः। मच्चुधेय्य—मृत्युधेय। केयूर में द्वित्व नहीं होता। यहाँ एकार के स्थान में आकार हो जाता है। यथा—कायूर—केयूर।

इसी प्रकार ओकार से परे वकार को द्वित्व होता है और ओकार का उच्चारण ह्रस्व होता है—योब्बन—यौवन। अब्बोच्छिन्न—अव्यवच्छिन्न। ओक्खित्त—अवक्षिप्त।

आकारांत धातु—ज्ञा, दा, स्था प्रभृति से जो क्त बनते हैं, उनमें इन धातुओं का आकार ह्रस्व हो जाता है—

पञ्जवा—प्रज्ञावत्।

पट्ठपेति—प्रस्थापयति।

संखत—सख्यात ('संस्कृत' से भी संखत बनता है)। धातु के मध्य में स्थित आकार भी प्रायः ह्रस्व हो जाता है—

गहति, गहेति—गाहते।

उपसर्गस्थ ह्रस्व स्वर प्रायः दीर्घ हो जाता है। यथा—

पाटिभोग—प्रतिभोग।

पावचन—प्रवचन।

पाकट—प्रकट।

पाहेति—प्रहिणोति।

परतु कहीं उपसर्ग से अतिरिक्त स्थलों में भी अकार के स्थान में दीर्घ आकार देखा जाता है—

आलिंद—अलिंद (आगन)।

आजिर—अजिर।

पायास—पायस (खीर)।

गाव्यूत—गव्यूति।

उम्मार—उदुंबर, द्वारदेश।

फलाफल—फलफल।

खण्डाखण्डं—खण्डखण्डम्।

जैसा कि पहले लिखा गया है म् के स्थान में, पदांत में, अनुस्वार होता है। परंतु पद के मध्य में अनुस्वार भी होता है और विकल्प से परस्थित वर्ग का पंचम वर्ण उसके स्थान में होता है। कुङ्कुम और कुंकुम ; सङ्कान्ति और संकाति ; सण्डास और संडास आदि दोनो ही प्रकार के प्रयोग पाए जाते हैं।

जकार से पूर्व या तो अनुस्वार ही बना रहता है, अथवा अनुस्वार और जकार, दोनो ही के स्थान में ञ्ञ हो जाता है। यथा—सयोग अथवा सञ्ञोग।

हकार का संयोग जब वर्ग के पंचम अक्षर से होता है, तब प्रायः दोनो में स्थानविनिमय हो जाता है। चिन्ह—सं० चिह्न ; पुब्बन्ह—सं० पूर्वाह्ण ; मज्झन्ह—सं० मध्याह्न।

कभी-कभी अनुस्वार सहित ह्रस्व स्वर में अनुस्वार का लोप हो जाता है और ह्रस्व स्वर का दीर्घ हो जाता है—

सीह—सिंह, वीसति—विंशति; सण्डास—संदंश; दाठा—दंष्ट्रा। यह नियम सम् उपसर्ग में अधिकतर देखा जाता है, विशेष करके जब उसके बाद रेफ आता है। यथा—सारग—संराग, सारंभ—संरंभ, सारमी—सरमी।

इसके ठीक विपरीत, कभी-कभी दीर्घ स्वर के स्थान में ह्रस्व होता है और परिमाण पूरा करने के लिये ह्रस्व में अनुस्वार हो जाता है। यथा—नग—नाग (सर्प)।

सनंतन—सनातन; पिंज—पिच्छ (पूँछ)।

सम्मुञ्जनी—सम्मार्जनी (झाड़ू); संवरी—शर्वरी। इन दोनों उदाहरणों में रेफ का लोप भी हुआ है।

कभी-कभी ह्रस्व स्वर में भी अनुस्वार आ जाता है। यथा—

महिंस—महिष; दण्ड—दृढ।

मङ्कतो—मत्कृत (मेरे लिये)।

मङ्कुल—मत्कुण (खटमल)।

अंच—अर्च (पूजा करना)।

सिगाल—शृगाल।

कभी-कभी पद के अंत में अनुस्वार अथवा नकार जोड़ दिया जाता है—

सक्कच्च—सत्कृत्य।

कुदाचनं—कदाचन।

अञ्जदत्थुं—अन्यदस्तु।

तत्थच—तत्र च।

नकार का उदाहरण—चिरनायति।

कभी-कभी समास के पूर्व अवयव में अनुस्वार आगम हो जाता है—

अतलम्फस्स—अतलस्पर्श।

सब्बञ्जह—सर्वंजह।

अन्धन्तम—अन्धतमस्।

कभी-कभी पद-मध्यस्थित स्वर का लोप हो जाता है। यथा—

अग्ग —स० अगार। यहाँ रेफ के स्थान में ग हुआ है और बीचवाले आकार का लोप हुआ है। धीता—स० दुहिता। यहाँ द् के उकार का लोप हुआ है और द और ह मिलकर ध हो गया है, फिर इकार दीर्घ हो गया है। पुरानी हिंदी में भी पुत्री के लिये धिया शब्द मिलता है।

पद के आदि में कभी-कभी स्वर लुप्त हो जाता है। यथा—

लङ्कार—स० अलङ्कार; नुमति—सं० अनुमति।

परज्झति—अपराध्यति।

पवन—उपवन।

संस्कृत में भी अव और अपि के अकार का लोप, भागुरि आचार्य के मत से, माना गया है। उसी का यह और अधिकता से विकास ज्ञात होता है। इति का भी प्रायः ति रह जाता है। इव का व रह जाता है। इसका उल्लेख संधि-प्रकरण में है। पद के आदि में स्वर जोड़ने का उदाहरण है—इत्थी (स्त्रीः)। ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं है। उच्चारण में सौकर्य होना ही इसका मुख्य हेतु है।

कहीं-कहीं पद के बीच में भी स्वर आ जाते हैं।

किलेस—स० क्लेश।

आचारिय—आचार्य।

हियो या हिय्यो—ह्यः।

अरहति—अर्हति।

हरद—ह्रद।

सिरी—श्रीः।

हिरी—ह्री।

पिलवति—प्लवति।

व्यञ्जन परिवर्तन

Guttural—संस्कृत के कवर्ग के स्थान में, पाली में परिवर्तन होने पर, प्रायः चवर्ग होता है। यथा—

चुण्ड—कुण्ड।

palatals—संस्कृत के चवर्ग के स्थान के पाली में कवर्ग होता है। यथा—भिसक—स० भिषज।

मिलक्ख—म्लेच्छ।

पभंगून—प्रभञ्जन (वायु)।

कभी-कभी अक्षरों में परस्पर परिवर्तन होते देखे गए हैं। यथा—

(१) ध के स्थान में ह—रुहिरो—स० रुधिर।

(२) त के स्थान में द—सुगदो—स० सुगतः।

ग

(३) त के स्थान में ट—पहटो—स० प्रहत.।

(४) ग के स्थान में क।

(५) र के स्थान में ल—पलिपन्नो—परिपन्न।

(६) य के स्थान में ज—गवजो—स० गवय.।

(७) ज के स्थान में य—नियम्पुत्त—सं० निजम्पुत्रम्।

(८) त के स्थान में क—नियको—नियत।

Assimilation—Progressive and Regressive.

कभी-कभी जब दो व्यंजनों का संयोग रहता है, पूर्व अक्षर को पर रूप हो जाता है, अर्थात् पूर्व अक्षर अपने पर के अक्षर में परिवर्तित हो जाता है। पाली में इस प्रकार पर रूपवाला प्रयोग प्रचुरता से पाया जाता है।

(१) जब किसी स्पर्श वर्ण का (क से लेकर म पर्यंत वर्ण स्पर्श कहलाते हैं), तो पूर्व वर्ण को पर रूप होता है—

सक्+त= सत्त ।

सक्+थि= सत्थि ।

तप्+त= तत्त ।

उद्+कम्पेति= उक्कम्पेति ।

तद्+करो= तक्करो ।

उद्+गच्छति= उग्गच्छति ।

भुज्+त= भुत्त ।

मुच्+त= मुत्त ।

उद्+चिनति= उच्चिनति ।

उद्+छेदी= उच्छेदी ।

उद्+जल—उज्जल ।

उद्+झायति—उज्झायति ।

नोट—यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि ये परिवर्तन प्रायः संस्कृत की संधि के अनुसार ही हुए हैं ।

उद्+गण्हाति= उग्गण्हाति ।

उद्+खिपति= उक्खिपति ।

उद्+छिन्दति= उच्छिन्दति ।

उद्+तिण्ण= उत्तिण्ण ।

उद्+लोकेति= उल्लोकेति ।

तद्+पुरिस= तप्पुरिस ।

(२) कहीं-कहीं दो व्यंजनों के योग होने पर परव्यंजन को पूर्व रूप होता है, अर्थात् पर व्यंजन के स्थान में पूर्व वर्ण हो जाता है—

पाप्+नोति= पप्पोति ।

क्रुध+त=क्रुद्ध ।

रुध+त=रुद्ध ।

लभ+त=लद्ध ।

नोट—यहाँ भी संधि होने से रुद्ध, लद्ध आदि रूप होते हैं।

(४) कभी-कभी तालव्य अक्षर के बाद दंत्य अक्षर के प्रथम चार वर्णों में से कोई आता है, तो दोनों वर्ण मूर्धन्य वर्ग में परिणत हो जाते हैं। यथा—

मज्+त=मट्ठ या मट्ट ।

पुच्छ्+त=पुट्ठ ।

इच्छ्+त=इट्ठ ।

पद के अंत में म के स्थान में न हो जाता है, यदि उसके बाद तकार हो तो। यथा—

गम्+त्वा=गन्त्वा ।

पद के आदि में म रहने से उससे पूर्ववर्ती दंत्य अक्षर के स्थान में भी म हो जाता है—

उद्+मग्ग=उम्मग्ग ।

य

य के स्थान में प्रायः उसका पूर्ववर्ती अक्षर हो जाता है। विशेष करके कर्मवाच्य क्रिया के यकार के स्थान में यह पूर्व रूप अधिकतर देखा जाता है—

गम्+य=गम्म ।

पच्+य=पच्च ।

मज्+य=मज्ज ।

भण्+य=भण्ण ।

दिव्+य=दिब्ब ।

खाद्+य=खज्ज (द के स्थान में ज होता है)।

खन्+य=खञ्ज।

समास के अंतर्गत य (जो संधि होकर इ के स्थान में होता है) पूर्ववर्ती अक्षर में परिणत हो जाता है। यथा—

पल्लङ्को—पल्यङ्क (पलि+अङ्क)।

विपल्लासो—विपर्यासः।

अप्पेक्खं—अप्येकत्र।

अब्भुग्गच्छति—अभ्युद्गच्छति।

त्य के स्थान च्च होता है। त्य के अंत का स्वर अविकृत रहता है—

अच्चन्त—अत्यन्तम्।

पच्चयो—प्रत्ययः।

पच्चेति—प्रत्येति (विश्वास करता है)।

इच्चस्स—इत्यस्य।

इच्चादि—इत्यादि।

जच्चन्धो—जात्यन्धः।

सच्च—सत्य।

ध्य के स्थान में ज्झ होता है—

अज्झगमो—अध्यगमः।

अज्झोगाहित्वा—अध्यवगाह्य।

नोट—यहाँ पाली में अधि उपसर्ग रहने पर भी क्त्वा के स्थान में ल्यप् नहीं हुआ है। यह विषय ल्यप् के प्रकरण में देखना चाहिए।

अज्झुपगतो—अध्युपगतः।

अज्झेति—अध्येति।

द्य के स्थान में ज्ज होता है—

नज्जा—नद्या।

यज्जेवं—यद्येवम्।

मज्ज—मद्य ।

थ्य के स्थान में च्छ होता है—

तच्छ—तथ्य ।

रच्छा—रथ्या ।

व्य के स्थान में ब्ब होता है। (पद के मध्य में ही)—

दिब्ब—दिव्य ।

पद के आदि में व्य रहने से वकार के स्थान में तो बकार हो जाता है, परन्तु यकार में परिवर्तन नहीं होता—

ब्याकरणं—व्याकरणम् ।

ब्यञ्जनं—व्यञ्जनम् ।

स के बाद यकार आने से य के स्थान में स हो जाता है ।

पस्स—पश्य । यहाँ पहले तालव्य के स्थान में दन्त्य सकार हो जाता है ।

पाली में हकार और यकार के स्थान-परिवर्तन का उदाहरण बहुत अधिकता से मिलता है । जहाँ-जहाँ ह्य होता है, वहाँ वहाँ य्ह हो जाता है अर्थात् हकार से परवर्ती यकार उससे पूर्व आ जाता है—

सय्ह—सह्य ।

गुय्ह—गुह्य ।

पद के आदि में स्थित य अपने पूर्ववर्ती दंत्य अक्षर को भी यकार में परिणत कर देता है—

उद्+युञ्जति=उय्युञ्जति ।

उद्+याति=उय्याति ।

उद्+यान=उय्यान ।

र

पद के अंत में स्थित र प्राय अपने परवर्ती अक्षर में परिवर्तित हो जाता है—

कर्+तब्ब=कत्तब्ब ।

कर्+ता=कत्ता ।

कर्+य=कय्य ।

धर्+म=धम्म ।

अधिकतर रेफ का लोप भी देखा जाता है—

मर्+त=मत ।

कर्+त=कत ।

कभी-कभी रेफ के लोप होने पर उसका पूर्ववर्ती स्वर दीर्घ हो जाता है । यथा—

कर्+तब्ब=कातब्ब ।

कर्+तुं=कातुं ।

नोट—संस्कृत में रेफ का रेफ के परे लोप होता है और तब पूर्ववर्ती ह्रस्व स्वर दीर्घ हो जाता है। यथा—पुनर्+रमते=पुना रमते ।

रेफ् के बाद नकार आने से नकार को णत्व हो जाता है और फिर रेफ् भी णत्व में परिणत हो जाता है ।

चर्+न=चिण्ण । अकार के स्थान में इकार संस्कृत में भी होता है और चीर्ण रूप बनता है ।

रेफ और लकार के संयोग होने से रेफ लकार में परिणत हो जाता है—

दुर्+लभो=दुल्लभो ।

स

प्स के स्थान में च्छ होता है—

जिगुप्+सा=जिगुच्छा ।

त्स के स्थान में भी च्छ होता है—

तिकित्+सा=तिकिच्छा ।

कभी-कभी म के बाद त आने से त के स्थान में ट होता है और म भी ट में परिणत हो जाता है—

कम्+त=कट्ट ।

किलिम्+त=किलिट्ट ।

इम्+त=इट्ट ।

नोट—यहाँ प्रत्यक्ष ही संस्कृत का पूरा प्रभाव पड़ा है। संस्कृत में कष्ट, क्लिष्ट, दष्ट आदि मूर्धन्य के कारण होते हैं। पाली में मूर्धन्य ष के स्थान में दन्त्य स हो गया है, तो भी वह अपना असर नहीं छोड़ बैठा है। और फलत. अपने परवर्ती दंत्य अक्षर पर वह प्रभाव डाल ही देता है।

पद के आदि में स्थित सकार कभी-कभी अपने पूर्ववर्ती दंत्य अक्षर को भी सकार में बदल देता है—

उद्+साह=उस्साह ।

उत्+सुक=उस्सुक ।

अधिकतर स और त मिलकर त्त होता है—

कम्+त=कत्त ।

कभी-कभी स और त मिलकर त्थ होता है—

वस्+त=वुत्थ ।

ह

पद से पर पदादि हकार के स्थान में पूर्ववर्ती वर्ग का द्वितीय अथवा चतुर्थ अक्षर होता है। वर्ग के प्रथम अक्षर के बाद हकार आने से उसके स्थान में द्वितीय और तृतीय के बाद आने से चतुर्थ अक्षर होता है। उदाहरण—

उद्+हरति=उद्धरति ।

उद्+हरण=उद्धरण ।

उद्+हत=उद्धत ।

नोट—संस्कृत में भी यही रूप होते हैं और उसमें इतनी अड़चन नहीं पड़ती, वहाँ तो साधारण संधि के नियम से ही काम चल जाता है। यहाँ भी संधि का ही यथार्थ में यह विषय है।

अनुनासिक (मकार, नकार आदि) तथा यकार और वकार के साथ हकार का संयोग होने से प्रायः स्थान परिवर्तन हो जाता है। यथा—

गह्+ण=गण्ह।

मह्+य=मय्ह।

जिह्+वा=जिव्हा।

कभी-कभी ह और य के संयोग होने पर ह के स्थान में य हो जाता है।

लेह्+य=लेय्य।

कभी-कभी—विशेष करके हन् धातु में—हकार के स्थान में घ हो जाता है। यथा—

हनति—अथवा घनेति।

घञ्ज—(हन्+य)।

घम्मति—हम्मति।

नोट—संस्कृत में भी हन् धातु के ह के स्थान में विशेष अवसर पर घ होता है—यथा घातयति, घात आदि।

पदांत ह और त के स्थान में कभी-कभी द्ध और कभी-कभी ढ देखा जाता है। यथा—

दुह्+त=दुद्ध (संस्कृत में दुग्ध होता है)।

लिह्+तुं=लेढुं।

कभी-कभी इस ढ के स्थान में ल भी होता है।

लेलुं; मुह्+त=मूढ=मूल।

रुह्+त=रूढ=रूल।

हकार और यकार के स्थानपरिवर्तन के सम्बन्ध में उल्लेख हो चुका है, उसके अतिरिक्त भी अनेक स्थलों में पाली में, इस प्रकार के उदाहरण मिलते हैं, जहाँ संस्कृत के शब्दों में अक्षरों का परस्पर स्थान-विनिमय देखा जाता है। कुछ उदाहरण ये हैं—

पर्युदाहासि के स्थान में पयिरुदाहासि।

आर्यि के स्थान में आयिर।

करिर—कयिर।

मसक—मकस।

रस्मि—रंसि।

कभी-कभी उच्चारण सौकर्य के लिये अथवा वृत्त के अनुरोध से पदखंड का ही लोप होता देखा जाता है। यथा—

छडगुल—छगुल। हिंदी में छंगा शब्द आता है।

दससहस्सी—दसहस्सी।

जम्बुदीपं अवेक्खन्तो अद्दस=जम्बुदीपं अवेक्खन्तो अद्द।

अभिञ्ञाय सच्छिकत्वा—अभिञ्ञा सच्छिकत्वा।

सुबंत प्रक्रिया

जैसा कि प्रथम पृष्ठ में लिखा गया है, पाली में संस्कृत की अपेक्षा वर्ण कम हैं। वचन और विभक्ति के विषय में पाली में भी ह्रास ही दृष्टि-गोचर होता है। आधुनिक भाषाओं के समान पाली में भी द्विवचन नहीं होता और उसका काम बहुवचन से लिया जाता है। व्याकरण में इसके दोनों वचनों की संज्ञा एकवचन और अनेकवचन ही अधिक उपयुक्त होगी। एक की विवक्षा में एकवचन और एक से अधिक की विवक्षा में अनेकवचन का प्रयोग होता है। विभक्तियाँ भी कम हैं। चतुर्थी और षष्ठी के रूपों में कोई भेद है ही नहीं। अन्यान्य विभक्तियों में भी प्रायः समान रूप मिलते हैं। जिस प्रकार संस्कृत में नपुंसक-लिंग में प्रथमा और द्वितीया के रूप समान होते हैं, उसी प्रकार

इसमें भी अनेक शब्दो में प्रथमा और द्वितीया के अनेकवचन के रूप समान होते हैं। तृतीया और पंचमी के अनेकवचन के रूप प्रायः समान-समान मिलते हैं।

साधारणतया विभक्तियों के प्रत्यय ये हैं—

	एकवचन	अनेकवचन
प्रथमा	सि	यो
द्वितीया	अ	यो
तृतीया	ना	हि
चतुर्थी	स	न
पंचमी	स्मा	हि
षष्ठी	स	न
सप्तमी	स्मिं	सु

किंतु विशेष-विशेष शब्दों में विशेष रूप देखे जाते हैं। तृतीया और पंचमी के अनेकवचन के "हि" के स्थान में विकल्प से "भि" पाया जाता है तथा पंचमी एकवचन के "स्मा" के स्थान में "म्हा" और सप्तमी एकवचन "स्मि" के स्थान मे "म्हि" भी मिलता है। यह पहले ही लिखा जा चुका है कि पाली में व्यंजनांत पदों का प्रायः प्रयोग नहीं होता, इसलिये अजंत और हलंत भेद की इसमें योग्यता नही है; तथापि संस्कृत में जो पद स्वरांत हैं, उनके पाली रूपों में तथा संस्कृत के व्यंजनांत पद जो पाली में स्वरांत हो जाते हैं, उनके रूपों में बहुत अंतर पाया जाता है, इसलिये संस्कृत के आधार पर स्वरांत और व्यंजनांत भेद देने से यहाँ भी सुविधा होगी।

स्वरांत

अकारांत पुल्लिंग बुद्ध शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	बुद्धो	बुद्धा

द्वि०	बुद्धं	बुद्धे
तृ०	बुद्धेन	बुद्धेहि, बुद्धेभि
च०	बुद्धाय, बुद्धस्स,	बुद्धान
पं०	बुद्धा, बुद्धस्मा, बुद्धम्हा	बुद्धेहि, बुद्धेभि
ष०	बुद्धस्स	बुद्धान
स०	बुद्धे, बुद्धस्मि, बुद्धम्हि	बुद्धेसु

ऊपर लिखे रूपों के देखने से ज्ञात होगा कि अकारांत शब्दों के प्रत्यय इस प्रकार हैं—

	ए०	अने०		ए०	अने०
प्र०	ओ	आ	च०	स्स, आय	आनं
द्वि०	०	ए	पं०	आ, स्मा, म्हा	एहि, एभि
तृ०	इन	एहि, एभि	ष०	स्स	आन
			स०	ए, स्मि, म्हि	सु

प्रथमा के बहुवचन में कभी-कभी आसे प्रत्यय भी देखा जाता है और यह वैदिक रूप देवासः की छाया पर ज्ञात होता है। इसी तरह पंचमी और सप्तमी के एकवचनों के "स्मा" और "स्मि" सर्वनामों के अनुकरण में प्रयोग किए गए हैं, ऐसा प्रतीत होता है। अन्यान्य अकारांत पुल्लिंग शब्द भी बुद्ध शब्द के समान होंगे। अकारांत नपुंसकलिंग शब्दों के रूप कुछ भिन्न होते हैं। जिस प्रकार संस्कृत में प्रथमा और द्वितीया दोनों में समान रूप होते हैं, उसी प्रकार पाली में भी प्राय. साम्य है और संस्कृत के एकवचन और बहुवचन के 'अनुस्वार' और 'आनि' पाली में भी पहुँच गए हैं।

यथा—प्र०	एक०	रूपम्	अने०	रूपानि
द्वि०	"	"	"	रूपानि

प्रथमा और द्वितीया के बहुवचनों में क्रमशः 'आ' और 'ए' वैकल्पिक प्रत्यय भी होते हैं। और-और विभक्तियों में भी कुछ-कुछ

अंतर दृष्टिगोचर होता है, अतः अकारांत नपुंसकलिंग के रूप नीचे दिए जाते हैं—

अकारांत नपुंसकलिंग रूप शब्द

	एकवचन	अनेकवचन	
प्र०	रूपं	रूपानि,	रूपा
द्वि०	रूपं	रूपानि,	रूपे
तृ०	रूपेन	रूपेहि,	रूपेभि
च०	रूपस्स, रूपाय	रूपानं	
प०	रूपा, रूपस्मा, रूपम्हा, रूपतो,	रूपेहि	रूपेभि
ष०	रूपस्स	रूपानं	
स०	रूपे, रूपस्मिं, रूपम्हि	रूपेसु	

इकारांत पुल्लिंग अग्गि शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	अग्गि	अग्गी
द्वि०	अग्गिं	अग्गी, अग्गयो
तृ०	अग्गिना	अग्गीहि, अग्गीभि
च०	अग्गिनो, अग्गिस्स	अग्गीनं
प०	अग्गिना, अग्गिस्मा, अग्गिम्हा	अग्गीहि, अग्गीभि
ष०	अग्गिनो, अग्गिस्स	अग्गीनं
स०	अग्गिनि, अग्गिस्मिं, अग्गिम्हि	अग्गिसु, अग्गीसु
संबो०	अग्गि	अग्गी, अग्गयो, (अग्गियो)

इसी प्रकार अन्य इकारांत पुल्लिंग शब्दों के रूप होंगे।

किसी-किसी इकारांत शब्द के प्रथमा और द्वितीया के बहुवचनों में 'यो' के स्थान में 'नो' होता है। यथा—सारमतिनो, सम्मादिट्ठिनो।

संस्कृत के समान इकारांत स्त्रीलिंग शब्दों के रूप में पाली में भी विशेषता है—यह उदाहरण द्वारा स्पष्ट होगा।

इकारांत स्त्रीलिंग रत्ति (रात्रि) शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	रत्ति	रत्ती, रत्तियो, रत्यो
द्वि०	रत्ति	रत्ती, रत्तियो, रत्यो
तृ०	रत्तिया, रत्या	रत्तीहि, रत्तीभि
च०	रत्तिया, रत्या	रत्तीनं
पं०	रत्तिया, रत्या	रत्तीहि, रत्तीभि
ष०	रत्तिया, रत्या	रत्तीनं
स०	रत्तिया, रत्या, रत्तियं, रत्यं	रत्तीसु
सं०	रत्ति	रत्ती, रत्तियो, रत्यो

कहीं-कहीं पंचमी के एकवचन में तसिल् प्रत्ययवाला रत्तितो रूप भी पाया जाता है।

सप्तमी के एकवचन में रत्तो रूप भी देखा जाता है।

इकारांत स्त्रीलिंग 'जाति' शब्द में कुछ विशेषता है। अतः इसके रूप ध्यान देने योग्य हैं—

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	जाति	जाती, जातियो, जत्यो, जच्चो
द्वि०	जाति	जाती, जातियो, जत्यो, जच्चो
तृ०	जातिया, जत्या, जच्चा	जातीहि, जातीभि
च०	जातिया, जत्या, जच्चा	जातीनं
पं०	जातिया, जत्या, जच्चा	जातीहि, जातीभि
ष०	जातिया, जत्या, जच्चा	जातीनं
स०	जातिया, जत्या, जच्चा, जातियं, जत्यं, जच्चं	जातीसु
सं०	जाति	जाती, जातियो, जत्यो, जच्चो

तृतीया से सप्तमी तक के एकवचन के रूप समान ही हैं

प्रथमा और द्वितीया के बहुवचन समान हैं तथा पंचमी और तृतीया के बहुवचन के रूप भी एक-से हैं। चतुर्थी और षष्ठी के रूप तो सर्वत्र प्रायः समान रहते ही हैं।

संस्कृत के क्तिन् प्रत्ययांत शब्द तथा रस्मि (रश्मि), भूमि, पालि, युवति, धूलि आदि शब्द रति शब्द के समान हैं। भूमि शब्द के सप्तमी के एकवचन में भूम्या रूप भी पाया जाता है।

इकारांत नपुंसक लिंग—वारि शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	वारि	वारानि, वारी
द्वि०	वारि	वारीनि, वारी
तृ०	वारिना	वारीहि, वारीभि
च०	वारिस्स, वारिनो	वारीनं
प०	वारिना, वारिस्मा, वारिम्हा	वारीहि, वारीभि
ष०	वारिस्स, वारिनो	वारीन
स०	वारिस्मि, वारिम्हि	वारीसु
सं०	वारि	वारीनि, वारी

अट्ठि, अक्खि, सप्पि, छदि, सत्थि, दधि, अच्छि आदि शब्दों के रूप भी वारि शब्द के समान होंगे।

उकारांत पुल्लिंग भिक्खु शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	भिक्खु	भिक्खू, भिक्खवो
द्वि०	भिक्खुं	भिक्खू, भिक्खवो
तृ०	भिक्खुना	भिक्खूहि, भिक्खूभि
च०	भिक्खुस्स, भिक्खुनो	भिक्खूनं
प०	भिक्खुना, भिक्खुस्मा, भिक्खुम्हा	भिक्खूहि, भिक्खूभि

	एकवचन	अनेकवचन
ष०	भिक्खुस्स, भिक्खुनो	भिक्खूनं
स०	भिक्खुस्मिं, भिक्खुम्हि	भिक्खूसु
सं०	भिक्खु	भिक्खू, भिक्खवो, भिक्खवे

कहीं-कहीं प्रथमा और द्वितीया के बहुवचनों में वो के स्थान में यो का प्रयोग भी पाया जाता है। यथा—जन्तुयो, हेतुयो।

पसु, बन्धु, मच्चु (मृत्यु), राहु, केतु, फग्गु (फल्गु), वेलु (वेणु), उच्छु (इक्षु) आदि शब्दों के रूप भी भिक्खु शब्द के समान होंगे।

उकारांत नपुंसकलिंग चक्खु (चक्षु)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	चक्खु	चक्खूनि, चक्खू
द्वि०	चक्खुं	चक्खूनि, चक्खू
तृ०	चक्खुना	चक्खूहि, चक्खूभि
च०	चक्खुस्स, चक्खुनो	चक्खूनं
पं०	चक्खुना, चक्खुस्मा—म्हा	चक्खूहि, चक्खूभि
ष०	चक्खुस्स, चक्खुनो	चक्खूनं
स०	चक्खुस्मिं—म्हि	चक्खूसु
सं०	चक्खु	चक्खूनि, चक्खू

प्रथमा के एकवचन में चक्खुं रूप भी मिलता है।

धनु (धनुः), दारु, मधु, मस्सु (श्मश्रु), अस्सु (अश्रु), वत्थु (वस्तु) आदि उकारांत नपुंसकलिंग शब्दों के रूप भी इसी प्रकार समझने चाहिए।

पाली में एकारांत या ओकारांत शब्दों का प्रायः अभाव है। केवल गो शब्द पाया जाता है। [illegible] विभक्तियों के एकवचनों में गव आदि आदेश हो जाता है

गो शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	गो	गवो, गावो
द्वि०	गव, गावं, गवुं, गावुं	गवो, गावो
तृ०	गवेन, गावेन	गोहि, गोभि, गवेहि
च०	गवस्स, गावस्स	गव, गोनं, गुन्नं
प०	गव, गावा, गवस्म—म्हा	गोहि, गाभि, गवेहि
ष०	गवस्स, गावस्स	गव, गोन, गुन्नं
स०	गवे, गावे, गवस्मि, गावस्मिं, गवम्हि, गावम्हि	गोसु, गवंपु, गावेषु
स०	गो	गवो, गावो

पाली में विशुद्ध आकारांत शब्दों का प्रायः अभाव है। संस्कृत सखि शब्द का सखा रूप होता है, परंतु इस शब्द के रूप बहुसंख्यक हैं और नियमबद्ध नहीं हैं। किसी-किसी विभक्ति में इकारांत से विभक्ति आती है, कहीं-कहीं आकारांत से। कहीं-कहीं रेफ का भी इसे आगम होता है। उदाहरण से यह स्पष्ट होगा।

सखा शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	सखा	सखायो, सखानो, सखिनो, सखा
द्वि०	सखान, सखार, सखं	सखी, सखायो, सखानो, सखिनो
तृ०	सखिना	सखारेहि—रेभि, सखेहि—भि
च०	सखिस्स, सखिनो	सखीन, सखान, सखारान
प०	सखिना, सखारा, सखारस्मा	सखेहि, सखेभि, सखारेहि, सखारेभि
ष०	सखिनो, सखिस्स	सखीन, सखानं, सखारान
स०	सखे	सखेसु

	एकवचन	अनेकवचन
सं०	सख, सखा, सखि, सखी, सखे	सखायो, सखानो, सखिनो, सखा

आकारांत स्त्रीलिंग कन्या शब्द—'कञ्ञा'

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	कञ्ञा	कञ्ञा, कञ्ञायो
द्वि०	कञ्ञं	कञ्ञा, कञ्ञायो
तृ०	कञ्ञाय	कञ्ञाहि, कञ्ञाभि
च०	कञ्ञाय	कञ्ञानं
पं०	कञ्ञाय	कञ्ञाहि, कञ्ञाभि
ष०	कञ्ञाय	कञ्ञानं
स०	कञ्ञाय, कञ्ञायं	कञ्ञासु
सं०	कञ्ञे	कञ्ञा, कञ्ञायो

इसी प्रकार पञ्ञा, सद्धा, विज्जा, तण्हा, इच्छा, गाथा, लता, नावा, गीवा, सिक्खा आदि शब्दों के रूप होंगे।

संस्कृत में अम्बावाचक शब्दों के संबोधन एकवचन में ह्रस्व हो जाता है, एकार नहीं होता। पाली में भी एकार नहीं होता। या तो प्रथमा के एकवचन के समान दीर्घान्त रूप होता है अथवा संस्कृत के अनुसार ह्रस्वान्त। पाली में अम्मा, अम्बा, अन्ना और ताता ये चार शब्द मातृवाचक हैं। इनके संबोधन एकवचन में अम्मा, अम्म; अम्बा, अम्ब, अन्ना, अन्न और ताता, तात—ये रूप होते हैं।

ईकारांत स्त्रीलिंग नदी शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	नदी	नदी, नदियो, नज्जो
द्वि०	नदिं, नदियं	नदी, नदियो, नज्जो

	एकवचन	अनेकवचन
तृ०	नदिया, नज्जा	नदीहि, नदीभि
च०	नदीया, नज्जा	नदीनं
पं०	नदिया, नज्जा	नदीहि, नदीभि
प०	नदिया, नज्जा	नदीन
स०	नदियां, नज्जा, नज्जं	नदीसु
सं०	नदि	नदी, नदियो, नज्जो

मही, वेतरणी, वापी, कदली, घटी आदि शब्दों के रूप भी इसी प्रकार के होंगे। ब्राह्मणी इत्यादि कुछ शब्दों के, संस्कृत के अनुसार, कुछ विशेप रूप भी देखे जाते हैं। यथा प्र० द्वि० तथा सबोधन के बहुवचनों में उसका ब्राह्मण्यो रूप भी होता है। इसी प्रकार तृतीया, चतुर्थी, पञ्चमी, षष्ठी और सप्तमी के एकवचनों में ब्राह्मण्या तथा स० एक० मे ब्राह्मण्यं होता है। इसी तरह दासी शब्द का प्र० द्वि० तथा संबोधन के बहुवचनों मे दास्यो तथा तृ० च० पं० प० स० के एकवचनों मे दास्या एव स० एक० मे दास्य रूप होते हैं।



उकारांत स्त्रीलिंग धेनु शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	धेनु	धेनू, धेनुयो
द्वि०	धेनुं	धेनू, धेनुयो
तृ०	धेनुया	धेनूहि, धेनूभि
च०	धेनुया	धेनून
पं०	धेनुया	धेनूहि, धेनूभि
प०	धेनुया	धेनून
स०	धेनुय, धेनुया	धेनूसु
सं०	धेनु	धेनू, धेनुयो

पञ्चमी के एकवचन में धेनुतो रूप भी प्रायः पाया जाता है।

धातु, रज्जु, ददु, कण्डु, कच्छु, विज्जु, यागु, आदि शब्दों के रूप भी इसी प्रकार होंगे।

ऊकारांत पुल्लिंग सयम्भू शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	सयम्भू	सयम्भू, सयम्भुवो
द्वि०	सयम्भुं	सयम्भू, सयम्भुवो
तृ०	सयम्भुना	सयम्भूहि —भि
च०	सयम्भुस्स, सयम्भुनो	सयम्भून
पं०	सयंभुना, सयम्भुस्मा—म्हा	सयम्भूहि —भि
ष०	सयम्भुस्स, सयम्भुनो	सयम्भून
स०	सयम्भुस्मि—म्हि	सयम्भूसु
सं०	सयम्भू	सयम्भू, सयम्भुवो

ऊकारांत स्त्रीलिंग वधू शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	वधू	वधू, वधुयो
द्वि०	वधुं	वधू, वधुयो
तृ०	वधुया	वधूहि- भि
च०	वधुया	वधून
पं०	वधुया	वधूहि भि
ष०	वधुया	वधून
स०	वधुया, वधुयं	वधूसु
सं०	वधु	वधू वधुयो

जम्बू, सरभू, सस्सू, सुतनू, चमू, आदि ऊकारांत शब्दों के रूप वधू शब्द के समान होंगे।

उकारांत पुल्लिंग पितु शब्द (पितृ)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	पिता	पितरो (पिता)
द्वि०	पितरं	पितरो, पितरे
तृ०	पितरा, पितुना	पितरेहि, पितरेभि, पितूहि, पितुभि
च०	पितु, पितुनो, पितुस्स	पितरान, पितानं, पितुनं, पितुंन्न
पं०	पितरा, पितुना	पितून, पितुनं, पितरेहि, पितरेभि, पितूहि, पितुभि
ष०	पितु, पितुनो, पितुस्स	पितरानं, पितानं, पितूनं, पितुन्न
स०	पितरि	पितरेसु, पितुसु, पितूसु
सं०	पित, पिता	पितरो

मातु, जामातु आदि शब्दों के ऐसे ही रूप होंगे।

उकारांत कत्तु शब्द—(कर्तृ)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	कत्ता	कत्तारो
द्वि०	कत्तारं	कत्तारो, कत्तारे
तृ०	कत्तारा, कत्तुना	कत्तरेहि, कत्तारेभि
च०	कत्तु, कत्तुनो, कत्तुस्स	कत्तारानं, कत्तान, कत्तूनं
पं०	कत्तारा	कत्तारेहि, कत्तारेभि
ष०	कत्तु, कत्तुनो, कत्तुस्स	कत्तारान, कत्तान, कत्तून
स०	कत्तरि	कत्तारेसु, कत्तूसु
सं०	कत्त, कत्ता, कत्ते	कत्तारो

सत्थु (शास्तृ), भत्तु (भर्तृ), नेतु, झातु (ध्यातृ), छेत्तु, दातु प्रभृति शब्दों के रूप ऐसे ही होंगे।

ऋकारांत स्त्रीलिंग मातृ शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	माता	माता, मातरा
द्वि०	मातरं	माता, मातरे
तृ०	मातरा, मातुया (क्वचित्) मत्या, मात्या	मातरहि, मातरेभि मातूहि, मातूभि,
च०	मातु, मातुया, मत्या, मातुस्स	मातान, मातून (मातूनं), मातरान
प०	मातरा, मातुया, मत्या	मातरेहि, मातरेभि, मातूहि, मातूभि
ष०	मातु, मातुया, मत्या, मातुस्स	मातान, मातूनं (मातून), मातरान
स०	मातरि, मातुया, मत्या, मातुयं, मत्यं	मातूसु, मातरेसु
सं०	मात, माता	माता, मातरा

धीतु (दुहितृ) शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	धीता	धीता, धीतरा
द्वि०	धीतरं, धीतं	धीतरा, धीतरे
तृ०	धीतरा, धितुया	धीतरेहि, धीतरेभि, धीतूहि, धीतूभि
च०	धीतु, धीतुया	धीतान, धीतून, धीतानं
पं०	धीतरा, धीतुया	धीतरेहि, धीतरेभि, धीतूहि, धीतूभि
ष०	धीतु, धीतुया	धीतान, धीतून, धीतरान

	एकवचन	अनेकवचन
स०	धीतरि, धीतुया, धीतुय	धीतूसु, धीतरेसु
स०	धीत, धीता	धीता, धीतरो

व्यजनांत

पाली में व्यजनात पदों का प्रयोग प्रायः नहीं होता, यह पूर्व ही लिखा जा चुका है, परंतु सस्कृत में जो शब्द व्यजनात हैं, और पाली व्याकरण के अनुसार जब स्वरात हो जाते हैं, तब भी उनके रूप में साधारण स्वरात पदों की अपेक्षा भेद रहता है, और प्रायः संस्कृत के व्यजन नकार तकार आदि स्वरात पदों पर भी अपना प्रभाव प्रकट कर देते हैं। इसलिये सौकर्यार्थ उन्हें (व्यंजनात जो पाली में स्वरात हो गए हैं) पृथक् रखना ही उचित होगा।

अत्ता शब्द (आत्मन्)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	अत्ता	अत्ता, अत्तानो
द्वि०	अत्तान, अत्त	अत्तानो, अत्ते
तृ०	अत्तना, अत्तेन	अत्तनेहि, अत्तनेभि, अत्तेहि, अत्तेभि
च०	अत्तनो, अत्तस्स	अत्तान, अत्तनेहि, अत्तनेभि
प०	अत्तना, अत्तस्मा, अत्तम्हा	अत्तेहि, अत्तेभि
ष०	अत्तनो, अत्तस्स	अत्तानं
स०	अत्तनि, अत्ते, अत्तस्मि, अत्तस्मि, अत्तम्हि	अत्तनेसु
स०	अत्त, अत्ता	अत्तानो, अत्ता

ब्रह्मा शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	ब्रह्मा	ब्रह्मानो

	एकवचन	अनेकवचन
द्वि०	ब्रह्मानं, ब्रह्मं	ब्रह्मानो
तृ०	ब्रह्मना (ब्रह्मुना)	ब्रह्मेहि, ब्रह्मेभि, ब्रह्मूहि, ब्रह्मूभि
च०	ब्रह्मस्स, ब्रह्मुनो	ब्रह्मानं, ब्रह्मूनं
पं०	ब्रह्मना (ब्रह्मुना)	ब्रह्मेहि, ब्रह्मेभि, ब्रह्मूहि, ब्रह्मूभि
ष०	ब्रह्मस्स, ब्रह्मुनो	ब्रह्मानं, ब्रह्मूनं
स०	ब्रह्मनि, ब्रह्मे ब्रह्मस्मिं, ब्रह्मम्हि	ब्रह्मेसु
सं०	ब्रह्मे	ब्रह्मानो, ब्रह्मा

राजा शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	राजा	राजानो, राजा
द्वि०	राजानं, राजं	राजानो
तृ०	रञ्ञा, राजेन, राजिना	राजूहि, राजूभि, राजेहि, राजेभि
च०	रञ्ञो, राजिनो, राजस्स	रञ्ञं, राजूनं, राजानं
पं०	रञ्ञा, राजस्मा, राजम्हा	राजूहि राजूभि, राजेहि, राजेभि
ष०	रञ्ञो, राजिनो, राजस्स	रञ्ञं, राजूनं, राजानं
स०	रञ्ञे, राजिनि, राजस्मिं, राजम्हि	राजूसु, राजेसु
सं०	राज, राजा	राजानो, राजा

पुमा (पुमान)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	पुमा, पुमो	पुमा, पुमानो
द्वि०	पुमानं पुमं	पुमानो, पुमाने, पुमे
तृ०	पुमाना, पुमुना, पुमेन	पुमानेहि, पुमानेभि, पुमेहि, पुमेभि

	एकवचन	अनेकवचन
च०	पुमुनो, पुमस्स	पुमानं
प०	पुमाना, पुमुना, पुमा, पुमस्मा, पुमम्हा	पुमानेहि, पुमानेभि, पुमेहि, पुमेभि
ष०	पुमुनो, पुमस्स	पुमानं
स०	पुमाने, पुमे, पुमस्मिं, पुमम्हि	पुमानेसु, पुमासु, पुमेसु
सं०	पुमं, पुम	पुमानो, पुमा

सा (श्वा)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	सा	सा, सानो
द्वि०	सं, सान	से, साने
तृ०	सेन, साना	साने, सेहि, सेभि, साहि, साभि
च०	सस्स, साय	सानं
प०	सा, सस्मा, सम्हा, साना	सेहि, सेभि, सानेहि, सानेभि
ष०	सस्स	सानं
स०	से, सस्मि, सम्हि, साने	सासु
सं०	स	सा, सानो

गुणवन्तु शब्द—पुल्लिंग (गुणवत्)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	गुणवा	गुणवन्तो, गुणवन्ता
द्वि०	गुणवन्तं	गुणवन्ते
तृ०	गुणवता, गुणवन्तेन	गुणवन्तेहि, गुणवन्तेभि
च०	गुणवतो, गुणवन्तस्स	गुणवतं, गुणवन्तानं
प०	गुणवता, गुणवन्ता, गुणवन्तस्मा, गुणवन्तम्हा	गुणवन्तेहि, गुणवन्तेभि

	एकवचन	अनेकवचन
प०	गुणवता, गुणवन्तस्स	गुणवतं, गुणवन्तानं
स०	गुणवति, गुणवन्ते, गुणवन्तस्मिं, गुणवन्तम्हि	गुणवन्तेसु
म०	गुणव, गुणवं, गुणवा	गुणवन्तो, गुणवन्ता

कुलवन्तु, यसवन्तु, भगवन्तु, चक्खुमन्तु आदि शब्दों के रूप इसी प्रकार के होंगे।

गच्छन्त शब्द (गच्छत्) पुल्लिंग

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	गच्छं, गच्छन्तो	गच्छन्तो, गच्छन्ता
द्वि०	गच्छन्तं	गच्छन्ते
तृ०	गच्छता, गच्छन्तेन	गच्छन्तेहि, गच्छन्तेभि
च०	गच्छतो, गच्छन्तस्स	गच्छतं, गच्छन्तानं
प०	गच्छता, गच्छन्ता, गच्छन्तस्मा, गच्छन्तम्हा	गच्छन्तेहि, गच्छन्तेभि
ष०	गच्छतो, गच्छन्तस्स	गच्छन्तं, गच्छन्तानं
स०	गच्छति, गच्छन्ते, गच्छन्तस्मिं, गच्छन्तम्हि	गच्छन्तेसु
म०	गच्छं	गच्छन्ता

चरन्त, तिट्ठन्त, रुदन्त, सुणन्त (भुञ्जन्त), पचन्त (पचत) प्रभृति शब्दों के ऐसे ही रूप होंगे।

महन्त और अरहन्त शब्दों के प्रथमा एकवचन में महा और अरहा रूप भी होते हैं।

भवन्त शब्द के रूप भी गच्छन्त के समान होंगे। विशेषता यह है—प्र० ब० भवन्तो, भोन्तो, भवन्ता; तृ० ए० भवता, भोता, भवन्तेन, च० प० एक० भवतो, भोतो, भवन्तस्स; सम्बो० एक० भो,

भन्ते, भोन्त; बहु० भवन्तो, भोन्वतो, भवन्ता, भोन्ता। सन्त शब्द के तृ० ब० में सब्भि रूप विकल्प से होता है।

अद्ध शब्द (अध्वन्)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	अद्धा	अद्धा, अद्धानो
द्वि०	अद्धान	अद्धाने
तृ०	अद्धुना	अद्धानेहि, अद्धानेभि
च०	अद्धुना	अद्धान
प०	अद्धुना	अद्धानेहि, अद्धानेभि
ष०	अद्धुना	अद्धान
स०	अद्धनि, अद्धाने	अद्धानेसु
सं०	अद्ध	अद्धा, अद्धानो

यहाँ यह नोट करने योग्य है कि तृतीया, चतुर्थी, पञ्चमी और षष्ठी में संस्कृत के अध्वन् शब्द के वकार के प्रभाव के कारण सम्प्रसारण उकार हुआ है।

युव शब्द (युवन्)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	युवा (यूनो)	युवा, युवानो, युवाना
द्वि०	युवानं, युवं	युवाने, युवे
तृ०	युवाना, युवनेन, युवेन	युवानेहि, युवानेभि, युवेहि, युवे
च०	युवानस्स, युवस्स	युवानानं, युवान
प०	युवाना, युवानस्मा, युवानम्हा	युवनेहि, युवानेभि, युवेहि, युवेभि
ष०	युवानस्स, युवस्स,	युवानानं, युवानं
स०	युवाने, युवं युवानस्मि,	युवानेसु, युवासु, युवेसु

	एकवचन	अनेकवचन
	युवानम्हि, युवस्मि, युवम्हि	
सं०	युव, युवा, युवान, युवाना	युवानो, युवाना

मघव शब्द के रूप भी ऐसे ही होंगे। किन्तु वैकल्पिक मघवन्तु शब्द के रूप गुणवन्तु के समान होंगे।

मुद्ध शब्द (मूर्धन) के रूप में विशदता है—

प्र० ए० मुद्धा—ब० मुद्धा, मुद्धानो, द्वि० ए० मुद्धं—बहु० मुद्धाने, तृ० पं० एक० मुद्धना—स० एक० मुद्धनि—बहु० मुद्धानेसु

मनो (मनस)

	एकवचन
प्र०	मनो, मन
द्वि०	मनो, मन
तृ०	मनसा, मनेन
च०	मनसो, मनस्स
पं०	मनसा, मनस्मा, मनम्हा
ष०	मनसो, मनस्स
स०	मनसि, मने, मनस्मिं, मनम्हि
सं०	मनो, मन

मनो शब्द के रूप बहुवचन में नहीं पाए जाते यद्यपि पाली व्याकरणकारों ने उसे स्थान दिया है। विधुशेखर भट्टाचार्य ने इस सम्बन्ध में कुछ नहीं लिखा है, किन्तु गेगर तथा अन्य विद्वानों ने इस विषय का उल्लेख किया है।

सिर, उर, तेज, पय, यस, चेत आदि शब्द मनोगण के अन्तर्गत हैं, और इनके रूप भी मनो शब्द के समान चलते हैं। यद्यपि ये सब शब्द केवल नपुंसक लिंग हैं किन्तु पाली व्याकरणकारों ने मनोगण को पुल्लिंग और नपुंसक लिंग माना है।

doit

आयु शब्द (आयुस्)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	आयु, आयुं	आयू, आयूनि
द्वि०	आयु, आयुं	आयू, आयूनि
तृ०	आयुना, आयुसा	आयूहि, आयूभि
च०	आयुस्स, आयुनो	आयूनं, आयुसं
पं०	आयुना, आयुसा	आयूहि, आयूभि
प०	आयुस्स, आयुनो	आयूनं, आयुसं
स०	आयुनि, आयूसि	आयूसु
सं०	आयु, आयुं	आयू, आयूनि

दण्डी शब्द

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	दण्डी	दण्डी, दण्डिनो (दण्डियो)
द्वि०	दण्डिन, दण्डिं (दण्डिय)	दण्डी, दण्डिनो (दण्डिने, दण्डिये)
तृ०	दण्डिना	दण्डीहि, दण्डीभि
च०	दण्डिनो, दण्डिस्स	दण्डीनं
पं०	दण्डिना, दण्डिस्मा, दण्डिम्हा	दण्डीहि, दण्डीभि
प०	दण्डिनो, दण्डिस्स	दण्डीनं
स०	दण्डिनि, दण्डिने दण्डिस्मिं, दण्डिम्हि	दण्डीसु, दण्डिनेसु
सं०	दण्डि	दण्डी, दण्डिनो

गुणवन्तु शब्द नपुंसकलिंग

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	गुणवं, गुणवन्तं	गुणवन्ता, गुणवन्तानि, गुणवन्ति
द्वि०	गुणवन्तं	गुणवन्ते, गुणवन्तानि, गुणवन्ति

तृतीया प्रभृति में पुल्लिंग शब्द के समान रूप होंगे। वन्त, मन्त प्रत्ययान्त नपुंसकलिंग शब्दों के रूप ऐसे ही होंगे।

अकारांत गच्छन्त शब्द नपुंसकलिंग (गच्छन्त्)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	गच्छं, गच्छन्तं	गच्छन्ता, गच्छन्तानि
द्वि०	गच्छन्तं	गच्छन्ते, गच्छन्तानि

शतृ प्रत्ययांत सब शब्दों के रूप नपुंसकलिंग में ऐसे ही होंगे। महा (महत्) शब्द के रूप में विशेषता है—प्र० ए० महं, महन्तं, महा; बहु०—महन्ता, महन्तानि, द्वि०—एक० महन्तं, बहु०—महन्ते, महन्तानि, तृतीया प्रभृति के रूप पुल्लिंग के समान होंगे।

सर्वनाम

जिस प्रकार संस्कृत में सर्वनाम के रूपों में कुछ-कुछ अंतर रहता है, उसी प्रकार पाली में भी विशेषताएँ हैं। इस संबंध में भी पाली संस्कृत का बहुत अधिक अनुकरण करती है। यह उदाहरण से स्पष्ट होगा।

पुल्लिंग सर्व शब्द (सब्ब)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	सब्बो	सब्बे
द्वि०	सब्बं	सब्बे
तृ०	सब्बेन	सब्बेहि, सब्बेभि
च०	सब्बस्स	सब्बेसं, सब्बेसानं
प०	सब्बस्मा, सब्बम्हा	सब्बेहि, सब्बेभि
ष०	सब्बस्स	सब्बेसं, सब्बेसानं
स०	सब्बस्मिं, सब्बम्हि	सब्बेसु
सं०	सब्ब, सब्बा	सब्बे

सब्बा शब्द (आकारांत स्त्रीलिंग) के रूप कञ्ञा शब्द के रूप के सदृश होंगे, केवल चतुर्थी षष्ठी के एकवचन में सब्बस्सा, बहुवचन में सब्बासं, सब्बासानं तथा सप्तमी के एकवचन में सब्बस्सं रूप होते हैं।

नपुंसकलिंग सब्ब शब्द के केवल प्रथमा, द्वितीया और संबोधन के रूपों में विशेषता है। अन्य सब रूप पुल्लिंग के समान होते हैं। प्र० द्वि०—ए० सब्बं; बहु०—सब्बानि संबोधन एक०—सब्ब, सब्बा; बहु०—सब्बानि।

कतर, कतम, उभय, इतर, अञ्ञ, अञ्ञतर, अञ्ञतम आदि शब्दों के रूप सब्ब शब्द के समान होते हैं।

संस्कृत में जिस प्रकार पूर्वादिगण के रूप में थोड़ी विशेषता पाई जाती है, ठीक उसी प्रकार पाली में भी पुब्ब, पर, अपर, दक्खिन, उत्तर शब्दों के सर्वत्र सब्ब शब्द के समान रूप होने पर भी प्रथमा और संबोधन के बहुवचन में और पंचमी और सप्तमी के एकवचन में विकल्प से बुद्ध शब्द के समान रूप होते हैं।

स्त्रीलिंग में—चतुर्थी, षष्ठी, सप्तमी—एक० में विकल्प से कञ्ञा शब्द के समान रूप होते हैं। इसी तरह नपुंसकलिंग में पञ्चमी और सप्तमी के एकवचन में विकल्प से चित्त शब्द के समान रूप होते हैं।

यद् शब्द (य)

य शब्द के रूप सर्वत्र सब्ब शब्द के समान होते हैं। यथा—पु० प्र० एक० यो—बहु० ये; द्वि० ए० यं—बहु० ये; तृ० ए० येन—बहु० येहि, येभि इत्यादि।

तद् (त)

त शब्द के पुल्लिंग के प्रथमा के एकवचन में सो, तथा स्त्रीलिंग प्रथमा के एकवचन में सा होता है—अन्यत्र सर्वत्र ही सब्ब शब्द के समान रूप होते हैं। केवल यह विशेषता है कि इसके पुल्लिंग और

स्त्रीलिंग के प्रथमा के एकवचन को छोड़कर सर्वत्र विकल्प से तकार के स्थान में नकार होता है।

[जिस प्रकार संस्कृत में द्वितीया विभक्ति में, तृतीया के एकवचन में तथा षष्ठी और सप्तमी के द्विवचन में एन लगता है, उसी प्रकार इसमें सर्वत्र ही एतत्स्थानीय नकार होता है।]

पुल्लिंग

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	सो	त, ने
द्वि०	तं, नं	ते, ने
तृ०	तेन नेन	तेहि, तेभि, नेहि, नेभि इत्यादि।

मोग्गल्लान, प्रयोगसिद्धि प्रभृति पालीव्याकरणकारों ने त शब्द के और भी रूपों का उल्लेख किया है। वे इस प्रकार हैं

	एकवचन	अनेकवचन
तृ० प०	तस्मा, नस्मा, ताय, नाय, अस्मा	ताहि, ताभि, नाहि, नाभि
च० प०	तस्माय, तस्सा, नस्माय, नस्सा, ताय, नाय, अस्साय, अस्सा, तिस्साय, तिस्सा	तासं, तासानं, नासं, नासानं, आसं आसानं, ...
स०	तस्सं, तस्सा, नस्सं, नस्सा, अस्सं, अस्सा, तिस्सं, तिस्सा, तायं, ताय, नायं, नाय	

एतद् (एत) शब्द

एत शब्द के पु० प्रथमा ए० व० एसो; स्त्री० प्र० ए० व० एसा को छोड़कर सब लिंग और सब विभक्तियों में सर्वशब्द के समान रूप होते हैं, केवल स्त्रीलिंग के तृतीया आदि के रूपों में कुछ विशेषता है, उसका उल्लेख नीचे किया जाता है—

तृ० पं० एक० एताय, एतिस्मा
च० ष० एक० एताय, एतिस्सा, एतिस्साय
स० एक० एताय, एतिस्सं, एतस्स, एताय

इम (इदम्)

पुल्लिंग

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	अयं	इमे
द्वि०	इम	इमे
तृ०	अनेन, इमिना	एहि, एभि, इमेहि, इमेभि
च०	अस्स, इमस्स	एस, एसानं, इमेसं, इमेसानं
पं०	अस्मा, इमम्हा	एहि, एभि, इमेहि, इमेभि
ष०	अस्स, इमस्स	एसं, एसानं, इमेसं, इमेसानं
स०	अस्मि, इमस्मि, इमम्हि,	एसु, इमेसु

स्त्रीलिंग

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	अय	इमा, इमायो
द्वि०	इमं	इमा, इमायो
तृ०	इमाय	इमाहि, इमाभि
च०	इमाय, इमिस्सा, इमिस्साय, अस्सा, अस्साय	इमास, इमासानं
प०	इमाय	इमाहि, इमाभि
ष०	इमाय, इमिस्सा, इमिस्साय, अस्सा, अस्साय	इमासं, इमामानं
स०	इमाय, इमिस्सं, अस्स	इमासु

नपुंसकलिंग

प्र० द्वि० एक० इदं, इम; बहु० इमानि

अन्यत्र पुल्लिंग के समान रूप होते हैं।

किसी-किसी के मत में इस शब्द के पूर्वोक्त रूप के अतिरिक्त स्त्रीलिंग तृ० ए० एकवचन में अम्मा और इमिम्मा; च० प० बहुवचन में आम तथा सप्तमी के एकवचन में इमाः भी रूप होते हैं।

अमु शब्द—(अदस्)

पुल्लिंग

	एकवचन	अनेकवचन	
प्र०	अमु (अमु)	अमू, अमवो	Nomi Accusative
द्वि०	अमुं	अमू, अमुवो	Instrumentive
तृ०	अमुना	अमूहि, अमूभि	dative
च०	अमुनो, अमुस्स	अमूसं, अमूसानं	ablative
पं०	अमुना, अमुस्मा, अमुम्हा	अमूहि, अमूभि	genitive
ष०	अमुनो, अमुस्स	अमूसं, अमूसानं	Locative
स०	अमुस्मि, अमुम्हि	अमूसु	vocative

स्त्रीलिंग

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	अमु, अमु	अमू, अमुयो
द्वि०	अमुं	अमू, अमुयो
तृ०	अमुया	अमूहि, अमूभि
च०	अमुया, अमुस्सा	अमूसं, अमूसानं
पं०	अमुया	अमूहि, अमूभि
ष०	अमुया, अमुस्सा	अमूसं, अमूसानं
स०	अमुयं, अमुस्सं	अमूसु

नपुंसकलिंग मे प्र० द्वि० ए० अमु—अनेकवचन—अमू को छो कर अन्य सब रूप पुल्लिंग के समान होते हैं।

किं शब्द (किम्)

किम् शब्द के स्थान में संस्कृत मे क आदेश होता है, पाली में भी के स्थान में क आदेश होकर क शब्द अकारांत बन जाता है, और उ रूप सब्ब शब्द के समान होते हैं। विशेषता केवल यह है कि पुल्लिंग नपुंसकलिंग के चतुर्थी और षष्ठी के एकवचन मे वैकल्पिक रूप कि तथा सप्तमी के एकवचन में किस्मिं और किम्हि भी पाए जाते हैं।

किं शब्द

पुल्लिंग

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	को	के
द्वि०	कं	के
तृ०	केन	केहि, केभि
च०	कस्स, किस्स	केस, केसानं
पं०	कस्मा, कम्हा	केहि, केभि
ष०	कस्स, किस्स	केस, केसानं
स०	कस्मि, कम्हि, किस्मि, किम्हि	केसु

स्त्रीलिंग के रूप ठीक सब्बा शब्द के समान होते हैं। नपुंसक मे—प्र० द्वि० एक० में क, बहु० मे कानि पद होता है। किसी-कि के मत से प्र० द्वि० के एकवचन में कि पद होता है। अन्य सब वि क्तियों के रूप पुल्लिंग के समान होते हैं।

पाली में को शब्द कभी-कभी कु के स्थान में भी प्रयुक्त होता कहीं-कहीं कथ के अर्थ में भी को शब्द देखा जाता है।

पं० विधुशेखर भट्टाचार्य ने इस स्थल मे उदाहरण-स्वरूप ते वण महाराज', इत्यादि उद्धृत किया है।

तुम्ह शब्द—(युष्मत्)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	त्वं, तुवं	तुम्हे
द्वि०	त्वं, तुवं, तव, ते	तुम्हे, [illegible]
तृ०	त्वया, तया	तुम्हेहि, तुम्हेभि
च०	तव, तुम्ह, तुम्हं	तुम्हाण
पं०	त्वया, तया	तुम्हेहि, तुम्हेभि
ष०	तव, तुम्ह, तुम्हं	तुम्हाण
स०	त्वयि, तयि	तुम्हेसु

किसी-किसी के मत में द्वि० एक० और बहु० में तुम्हं तथा प० एक० में [illegible] रूप भी होते हैं।

इसके अतिरिक्त तृ० च० षष्ठी के एक वचन में ते तथा प्र० द्वि० तृ० च० षष्ठी के बहुवचनों में वो रूप भी होता है।

स्त्रीलिंग में भी यही रूप होंगे। ते और वो पद, [illegible] के समान अपादादि में ही प्रयोग किए जाते हैं। पाद के आदि में इनका प्रयोग नहीं होता।

अम्ह शब्द—(अस्मद्)

	एकवचन	अनेकवचन
प्र०	अहं	वयं, अम्हे
द्वि०	मं, ममं	[illegible], णो
तृ०	मया	अम्हेहि, अम्हेभि
च०	मम, मम, मज्झं, अम्ह	अम्हाण, [illegible]
पं०	मया	अम्हेहि, अम्हेभि
ष०	मम, मम, [illegible]	[illegible]
स०	मयि	अम्हेसु

अन्य मत से—प्र० के बहुवचन मे अस्मा, द्वि० के एकवचन में अम्हं बहु० मे अस्मा तथा सप्तमी बहु० में अस्मासु रूप भी पाए जाते हैं।

इसके अतिरिक्त तृ० च० प० के एकवचन में मे तथा प्र० द्वि० तृ० च० और षष्ठी के बहुवचन मे नो रूप भी पाया जाता है।

संख्या—शब्द

एक शब्द के रूप सर्वत्र ही सब्ब शब्द के समान होंगे।

संस्कृत में उभ शब्द नित्य द्विवचनांत है; पाली में द्विवचन के अभाव में यह शब्द बहुवचन मे प्रयुक्त होता है, और इसके तीनों लिगों के रूप समान होते हैं।

बहुवचन

प्र०	द्वि०	उभो, उभे
तृ०	प०	उभोहि, उभोभि, उभेहि, उभेभि
च०	. प०	उभिन्नं
स०		उभोसु, उभेसु

कति शब्द नित्य बहुवचनांत है, तथा इसके भी तीनों लिंगों में समान रूप होते हैं।

बहुवचन

प्र०	द्वि०	कति
तृ०	पं०	कतीहि, कतीभि
च०	प०	कतीनं, कतिन्नं
स०		कतीसु

द्वि शब्द

द्वि शब्द भी पाली में बहुवचनांत है, और इसके भी रूप तीनों लिंगों में समान होते हैं।

बहुवचन

प्र० द्वि०	दुवे, द्वे
तृ० पं०	द्वीहि द्वीभि
च० ष०	दुविन्नं, द्विन्नं
स०	द्वीसु

ति—(त्रि शब्द ; यह शब्द स्वभावतः बहुवचन है ।)

	पुल्लिंग	स्त्रीलिंग	नपुंसकलिंग
प्र० द्वि०	तयो	तिस्सो	तीणि
तृ० पं०	तीहि, तीभि	तीहि, तीभि	तीहि, तीभि
च० ष०	तिण्णं, तिण्णन्नं	तिस्सन्नं	तिण्णं तिण्णन्नं
स०	तीसु	तीसु	तीसु

यहाँ पर प्र० द्वि० में संस्कृत के रूपों का प्रभाव स्पष्ट प्रकट है। षष्ठी के रूप में भी संस्कृत की छाया विद्यमान है। किसी-किसी के मत में च० ष० के स्त्रीलिंग में तिस्स, तिस्सन्नं रूप भी होते हैं।

चतु शब्द (चतुर)

	पुल्लिंग	स्त्रीलिंग	नपुंसकलिंग
प्र० द्वि०	चत्तारो, चतुरो	चतस्सो	चत्तारि
तृ० पं०	चतूहि, चतूभि	चतूहि, चतूभि	चतूहि, चतूभि
च० ष०	चतुन्नं	चतस्सन्नं	चतुन्नं
स०	चतूसु	चतूसु	चतूसु

पंच शब्द के तीनों लिंगों में समान रूप होते हैं।

प्र० द्वि०	पंच
तृ० प०	पंचहि, पंचभि
च० ष०	पंचन्नं

स० पचसु

छ, सत्त, अट्ठ, नव, दश, एकादस, द्वारस अथवा द्वादस वा बारस, तेरस वा तेलस, चतुद्दस था चोद्दस, पचदस वा पण्णरस, सोरस वा सोलस, सत्तदस वा सत्तरस तथा अट्ठादस वा अट्ठारस शब्दों के रूप इसी प्रकार समझने चाहिए।

विशति प्रभृति नवति पर्यंत सख्या-वाचक शब्द संस्कृत मे एकवचन होते हैं, उसी आधार पर पाली में भी इनके पर्यायवाचक शब्द एकवचन ही होते हैं।

एकूनवीसति प्रभृति शब्द स्त्रीलिंग हैं।

एकूनवीसति

	एक
प्र०	एकूनवीसति
द्वि०	एकूनवीसति
तृ च० पं० प०	एकूनवीसतिया
स०	एकूनवीसतिया, एकूनवीसतियं

तृतीया आदि मे विकल्प से एकूनवीसत्या रूप भी होते हैं। वीसति, एकवीसति, द्वेवीसति, वा द्वावीसति, वा बावीसति इत्यादि ति प्रत्ययात रूप इसी प्रकार होंगे।

विशति प्रभृति सस्कृत शब्दो के स्थान में पाली मे वीसति और वीसा एकवीसति; एकवीसा, द्वावीसति; द्वावीसा, तिसति, तिसा, चत्तालीसति, चत्तालीसा इत्यादि दोनो रूप होते हैं।

इनमे ति प्रत्ययात के रूप इकारात रत्ति शब्द के समान तथा आकारात वीसा प्रभृति के रूप—आकारात स्त्रीलिंग के रूपो के समान होगे। विशेषता केवल यह कि आकारात वीसा प्रभृति शब्द के प्रथमा के एकवचन में वीसा, एकवीसा आदि के स्थान मे वीसं एकवीसं आदि रूप दृष्टिगोचर होते हैं।

सत (शत), सहस्स, लक्ख आदि शब्द नपुंसकलिंग हैं, और इनके रूप चित्त शब्द के समान होंगे। तथा कोटि, पकोटि (प्रकोटि) प्रभृति स्त्रीलिंग शब्दों के रूप रत्ति शब्द के समान होंगे।

दुरोसील ने संख्या शब्द तथा उनके पूरणांक विस्तार से सूची दी है। पूरणांक अधिकतर संस्कृत के तम के स्थान में सम से बनते हैं। कुछ संख्याएँ यहाँ दी जाती हैं--

		पूरणांक
१	एक	पठम
२	द्व	दुतिय
३	तयो	ततिय
४	चत्तारो	चतुत्थ
५	पञ्च	पञ्चथ, पञ्चम
६	छ	छट्ठ, छट्ठम
७	सत्त	सत्थ, सत्तम
८	अट्ठ	अट्ठम
९	नव	नवम
१०	दस, रस, लस, ळस	दसम
११	एकारस, एकादस	एकारसम, एकादसम
१२	बारस, द्वारस	बारसम
१३	तेरस, तरस, तेळस	तेरसम
१४	चातुद्दस, चुद्दस	चातुद्दसम
१५	पञ्चदस, पञ्चरस, पन्नरस	पञ्चदसम
१६	सोळस, सोरस	सोळसम
१७	सत्तदस, सत्तरस	सत्तरसम
१८	अट्ठदस, अट्ठारस	अट्ठारसम
१९	एकूनवीसति, एकूनवीस, एकूनवीसं	

२०	वीसति, वीस	वीसतिम
२१	एकवीसति, एकवीसं	एकवीसतिम
३०	तिसति, तिंस	तिंसतिम
४०	चत्तालीस, चत्तारीसं	चत्तालिसतिम
५०	पञ्जास, पञ्चास	पञ्चासम
६०	सट्ठि	सट्ठिम
७०	सत्तति	सत्ततिम
८०	असीति	असीतिम
९०	नवुति	नवुतिम
१००	सत	सतम
२००	बासत, द्वासत	बासतम
१०००	सहस्स	सहस्सम

क्रिया-विभाग

संस्कृत के समान पाली में भी क्रियाओं के दो पद होते हैं, परस्मैपद और आत्मनेपद, जैसा कि इन पदों के नामकरण से प्रतीत होता है। क्रिया का फल यदि कर्त्ता को हो, तो आत्मनेपद, यदि कर्ता से अतिरिक्त किसी को हो, तो परस्मैपद होना चाहिए। संस्कृत में ही शनै-शनैः इस नियम में शिथिलता आती गई, और अंत में यह पद-विभाग-प्रथा पर निर्भर हो गया। पाली में आते-आते इसमें और भी शिथिलता हो गई। कहने के लिये पाली में भी दो ही पद होते है। संस्कृत में जिस प्रकार अनुदात्त, ङित् आत्मनेपद का द्योतक है, स्वरित, ञित् परस्मैपद का परिचायक है, यह सब नियम पाली में कुछ नहीं है। पाली में प्रायः परस्मैपद का ही प्रयोग होता है। केवल कहीं-कहीं आत्मनेपद दृष्टिगोचर हो जाता है। यहाँ तक कि कर्मवाच्य, भाववाच्य, कर्मकर्तृवाच्य आदि प्रयोगों में जहाँ संस्कृत

में आत्मनेपद होना आवश्यक है, वहां भी पाली में प्रायः विकल्प पाया जाता है। संस्कृत की धातु पाठावली दस गणों में विभक्त है, किंतु पाली में केवल सात गण ही माने गए हैं; अर्थात् भ्वादि, रुधादि, दिवादि, स्वादि, क्र्यादि, तनादि और चुरादि। संस्कृत के बाकी तीन गण—अदादि, तुदादि और जुहोत्यादि भ्वादि गण के अंतर्गत माने गए हैं।

संस्कृत में धातुगण दस प्रकार से प्रयुक्त होते हैं। लट्, लोट्, लङ् और विधिलिङ्; लिट्, लुट्, लृट्, आशीर्लिङ्, लुङ् और लृङ्। किंतु पाली में आशीर्लिङ् और लुट् का प्रयोग नहीं होता। इसमें केवल आठ ही लकार रह जाते हैं। लिट् लकार का प्रयोग भी पाली में बहुत ही कम होता है। लङ् और लुङ् भूत काल द्योतित करते हैं। इनमें से भी प्रायः भूतकाल-मात्र द्योतित करने के लिये लुङ् के रूपों ही का पाली में प्रचुरता से प्रयोग पाया जाता है।

लट् लकार

भू धातु

	परस्मैपद		आत्मनेपद	
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
प्रथम पुरुष	भवति	भवन्ति	भवते	भवन्ते
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
मध्यम पुरुष	भवसि	भवथ	भवसे	भवव्हे
उत्तम पुरुष	भवामि	भवाम	भवे	भवाम्हे

नोट—भ्वादिगणीय धातु के उत्तर स्थित अकार (विकरण अकार) का विकल्प से लोप होता है, और इसके स्थान में एकार होता है, इस नियम के अनुसार भवेति, भवेन्ति, आदि रूप भी हो सकते हैं।

भूधातु के स्थान में विकल्प से हू आदेश भी होता है—

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	होति	होन्ति
म०	होसि	होथ
उ०	होमि	होम

इन उदाहरणों से प्रकट होगा कि लट् लकार के प्रत्यय संस्कृत के अनुसार ही होते हैं। केवल आत्मनेपद के मध्यमपुरुष बहुवचन में ध्वे के स्थान में व्हे होता है। यथा—

	परस्मैपद		आत्मनेपद	
	एक०	बहु०	एक०	बहु०
प्र०	ति	अन्ति	ते	अन्त (रे)
म०	सि	थ	से	व्हे
उ०	मि	म	ए	म्हे

संस्कृत में जिस प्रकार मि और मा में पूर्व अकार दीर्घ हो जाता है, उसी प्रकार पाली में भी मि, म और म्हे के पूर्व स्थित अकार को दीर्घ हो जाता है।

पच, यज, वह, धम (ध्मा) आदि धातुओं के रूप इसी प्रकार होंगे।

ठा—(स्था)

संस्कृत में सार्वधातुक लकारों में स्था के स्थान में नित्य तिष्ठ आदेश होता है। पाली में उसका बिलकुल तिरस्कार नहीं हो सका, और ठा के स्थान में विकल्प से तिट्ठ आदेश होता है।

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	ठाति, तिट्ठति	ठन्ति, तिट्ठन्ति
म०	ठासि, तिट्ठसि	ठाथ, तिट्ठथ
उ०	ठामि, तिट्ठामि	ठाम, तिट्ठाम

जुहोत्यादि गण की कुछ आकारांत धातुओं में द्वित्वकार्य का प्रभाव देखा

जाता है। अन्य सब आकारान्त धातु ठा धातु के समान होंगी। गा और झा धातु क्रमशः गै और ध्यै धातु से बनी हैं, इसलिए इनके रूप गाति और झाति न होकर संस्कृत के ए के प्रभाव से प्रायः गायति, गायन्ति, झायति, झायन्ति इत्यादि होते हैं। संस्कृत का पाली पर प्रभाव कितना पड़ा है, और पाली संस्कृत से अथवा संस्कृत पाली से निकली है, इस विषय पर विचार करनेवाले को इससे भी सहायता मिलेगी।

कभी-कभी सम्, उत, प्रति, उ, नि उपसर्गों के रहने पर ठा के स्थान में ठह आदेश हो जाता है, आगे जाकर हिंदी में बिना उपसर्ग के भी ठहरना बन जाता है। उदाहरण सण्ठहति, सण्ठाति उट्ठहाति, उट्ठाति इत्यादि।

कभी-कभी अधि और अनु उपसर्ग के साथ ठा धातु के आकार के स्थान में एकार होता है। अधिट्ठेन्ति; उट्ठेन्ति। पा धातु के स्थान में भी विकल्प से पिव आदेश होता है तथा पिव का वकार भी विकल्प से बकार हो जाता है।

पिवति, पिबति, पाति; पिवन्ति, पिबन्ति, पन्ति इत्यादि।

दिश (दृश्) धातु के स्थान में विकल्प से पस्स, दिस्स और दक्ख आदेश होते हैं। पस्सति, पस्सन्ति, दिस्सति, दिस्सन्ति; दक्खति, दक्खन्ति इत्यादि।

गम धातु के स्थान में विकल्प से गच्छ और घम्म आदेश होते हैं। गच्छति, गच्छन्ति, घम्मति, घम्मन्ति गमति, गमेन्ति इत्यादि रूप होते हैं।

वद धातु के स्थान में विकल्प से वज्ज आदेश होता है। यथा—
वज्जति, वज्जन्ति, वज्जेति, वदति, वदन्ति, वदेति, वदेन्ति इत्यादि।

यम धातु के स्थान में विकल्प से यच्छ होता है। यथा—

यच्छति, यच्छन्ति, यमति, यमन्ति इत्यादि।

सद् धातु के स्थान में सीद् आदेश होता है। यथा—सीदति, सीदन्ति इत्यादि।

जि धातु के रूप संस्कृत के समान जयति, जयन्ति आदि भी होते हैं और विकल्प से जेति, जेन्ति आदि रूप भी होते हैं। जिस प्रकार संस्कृत में एक ही धातु कभी-कभी भिन्न-भिन्न गणों में पाई जाती हैं, उसी प्रकार पाली में भी कोई-कोई धातु भिन्न-भिन्न गणों में मिलती हैं। जि धातु इसका एक उदाहरण है। इसके रूप क्र्यादि गण के विकरण सहित भी मिलते हैं। यथा—

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	जिनाति	जिनन्ति
म०	जिनासि	जिनाथ
उ०	जिनामि	जिनाम

नी धातु के रूप भी दो प्रकार के होते हैं—नयति, नयन्ति और नेति, नेन्ति इत्यादि।

सर (सृ) के रूप—सरति, सरन्ति—आदि होते हैं।

दूसरे-दूसरे गणों की संस्कृत की ऋकारांत अन्य धातुओं के भी रूप प्रायः इसी प्रकार होते हैं।

ऊपर कहे गए गच्छ आदि आदेश संस्कृत में यद्यपि केवल लट्, लोट्, विधिलिङ् और लङ् में ही होते हैं, परंतु पाली में सभी लकारों में ये आदेश पाए जाते हैं। यहाँ तक कि कभी-कभी ये सब आदेश कृत् प्रत्ययों तक में पाए जाते हैं। विकरण के संबंध में भी यही नियम है। पाली के अकार यकार आदि विकरण—लट् आदि सर्वधातुक लकारों में ही बद्ध नहीं रहते, किंतु सभी लकारों में होते हैं।

अदादि गण धातु

पाली में जैसा कि पहले लिखा गया है, केवल सात गण होते हैं। और अदादि जुहोत्यादि तथा तुदादि गण की संपूर्ण धातुओं का

समावेश भ्वादिगण में कर दिया गया है। परन्तु यथार्थ में संस्कृत में अदादि, जुहोत्यादि प्रभृति गणों में गण प्रयुक्त जो विकार होते हैं, उनका आभास पाली तक में पहुँचता है, और अंश में भ्वादिगण से पृथक्-सी स्पष्ट प्रतीत होती है। इसलिये सुविधा के हेतु इनका यहाँ पृथक् निर्देश करना ही उचित प्रतीत होता है।

इ धातु—(गमनार्थक)

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	एति	एन्ति, यन्ति
म०	एसि	एथ
उ०	एमि	एम

या धातु के रूप याति, यन्ति आदि; वा धातु के वाति, वन्ति, भा के भाति, भन्ति; पा के पाति, पन्ति आदि होंगे।

ब्रू धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	ब्रूते	ब्रुवन्ते
म०	ब्रूसे	ब्रूव्हे
उ०	ब्रुवे	ब्रूम्हे

सी (शी) धातु के रूप विकल्प से भ्वादि और अदादि दोनों गणों के अनुसार मिलते हैं। यथा—सयति, सयन्ति आदि तथा—सेति, सेन्ति; सेते, सेन्ते इत्यादि।

अस धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अत्थि	सन्ति
म०	असि, अहि	अत्थ
उ०	अस्मि, अम्हि	अस्म, अम्ह

आस धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अच्छति	अच्छन्ति
म०	अच्छसि	अच्छथ
उ०	अच्छामि	अच्छाम

उप पूर्वक आस धातु के रूप उपासत्ति, उपासन्ति आदि होते हैं।

हन धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	हनति, हन्ति	हनन्ति
म०	हनसि (कहीं-कहीं हनासि)	हनथ
उ०	हनामि	हनाम

हन धातु के स्थान में विकल्प से वध आदेश होता है। उस दशा में उसके रूप वधति, वधन्ति इत्यादि होंगे।

वच धातु के वचति, वचन्ति इत्यादि रूप होते हैं। कभी-कभी प्रथम पुरुष के एकवचन में वत्ति रूप भी मिलता है।

दुह धातु के दुहति, दुहन्ति आदि रूप होते हैं। तथा विकल्प से दोहति, दोहन्ति आदि रूप भी मिलते हैं।

लिह धातु के रूप लिहति, लिहन्ति आदि तथा विकल्प से लेहति लेहन्ति आदि होते हैं।

रुद धातु के रुदति, रुदन्ति आदि तथा विकल्प से रोदति, रोदन्ति आदि रूप होते हैं।

विद धातु के विदति, विदन्ति आदि रूप होते हैं।

तुदादिगण

पुच्छ धातु—पुच्छति, पुच्छन्ति इत्यादि। इस (इष) धातु के स्थान में विकल्प से इच्छ आदेश होता है। यथा—इच्छति, इच्छन्ति आदि। विकल्प पक्ष में—एसति, एसन्ति आदि रूप होते हैं।

गिर गिल (गॄ)—गिरति, गिरन्ति, गिलति, गिलन्ति इत्यादि।

मर (मृ) धातु के स्थान में विकल्प से मीय्य और मीय आदेश होते हैं। यथा—मीय्यति, मीय्यन्ति, मीयति, मीयन्ति, मरति, मरन्ति इत्यादि।

सिच धातु—सिञ्चति, सिञ्चन्ति आदि।

लिप—लिम्पति, लिम्पन्ति इत्यादि।

नोट—हिंदी में आकर लिम्पति का मकार लुप्त हो गया, और केवल लीपना रूप रह गया।

मुच—मुञ्चति, मुञ्चन्ति इत्यादि।

विद—विन्दति, विन्दन्ति।

फुस (स्पृश)—फुसति, फुसन्ति इत्यादि।

दिवादिगण

संस्कृत के समान पाली में भी दिवादिगण में धातु के उत्तर 'य' विकरण होता है। परन्तु यह यकार जन, हा इत्यादि थोड़ी-सी धातुओं में ही प्रत्यक्ष दिखाई देता है। अधिकांश धातुओं में अधिकतर उसे पूर्व रूप हो जाता है। यथा दिव—दिव+य+ति=दिब्बति।

दिव धातु—दिब्बति, दिब्बन्ति आदि।

सिव—सिब्बति, सिब्बन्ति आदि।

युध—युज्झति, युज्झन्ति इत्यादि।

बुध—बुज्झति, बुज्झन्ति इत्यादि।

हिंदी में आकर यही बूझना हो जाता है।

कुध—कुज्झति, कुज्झन्ति इत्यादि।

विध (व्यध)—विज्झति, विज्झन्ति इत्यादि।

पद—पज्जति, पज्जन्ति इत्यादि।

नह—नय्हति, नय्हन्ति आदि। ह के साथ यकार के संयोग से दोनों में स्थान-परिवर्तन हो जाता है।

तुस (तुष्)—तुस्सति, तुस्सन्ति आदि।

मन—मञ्ञति, मञ्ञन्ति इत्यादि।

सम (शम्)—सम्मति, सम्मन्ति इत्यादि। जन धातु के स्थान में संस्कृत के समान ही जा आदेश होता है। जायते, जायन्ते आदि।

दा धातु—दीयति, दीयन्ति आदि।

जर (जॄ)—धातु के रूप में विशेषता है—

जीय्यति, जीय्यन्ति। किसी-किसी के मत से जिय्यति, जिय्यन्ति तथा विकल्प से जीरति, जीरन्ति और जरति, जरन्ति आदि रूप होते हैं।

रुधादिगण

संस्कृत में से यहाँ श्नम् विकरण होने से छिनत्ति इत्यादि रूप होते हैं; पाली में छिन्दति, रुन्धति आदि रूप होते हैं। यहाँ भ्वादिगण के समान अकारान्त धातु के अन्त में विकरण स्वरूप आता है, और धातु के पूर्व स्वर के अनन्तर अनुस्वार होता है, और उस अनुस्वार को अपने परवर्ती व्यंजन के अनुसार परसवर्ण होता है। जैसे—भिन्दति, रुन्धति, छिन्दति, भुञ्जति इत्यादि।

रुधादिगण के विकरण में एक और विशेषता है। जहाँ अ विकरण कहा गया है, वहाँ इ ई ए तथा ओ भी विकरण स्वरूप प्रयुक्त हुए हैं। अतः इस गण की धातुओं के पाँच भिन्न-भिन्न प्रकार के रूप उपलब्ध होते हैं। यथा—

रुध

प्रथमपुरुष एकवचन—रुन्धति, रुन्धिति, रुन्धीति, रुन्धेति, रुन्धोति।

„ बहुवचन—रुन्धन्ति, रुन्धिन्ति, रुन्धेन्ति, रुन्धोन्ति।

भिद

„ भिन्दति, भिन्दिति, भिन्दीति, भिन्देति, भिन्दोति आदि।

छिद

प्रथमपुरुष छिन्दति, छिन्दिति छिन्दाति, छिन्दन्ति छिन्देन्ति इत्यादि।

भुज

,, भुञ्जति, भुञ्जिति, भुञ्जीति, भुञ्जेति, भुञ्जोति इत्यादि।

युज

,, युञ्जति, युञ्जिति युञ्जीति, युञ्जेति युञ्जोति इत्यादि।

स्वादिगण

स्वादिगण की धातुओं के अनन्तर साधारणतः णु विकरण होता है, पर किसी-किसी धातु में णा तथा उणा प्रत्यय भी होते हैं। गुण होने से णु के स्थान में णो हो जाता है।

सु (श्रु) धातु

	(क)		(ख)	
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
प्र०	सुणोति	सुणोन्ति	सुणाति	सुणन्ति
म०	सुणोसि	सुणोथ	सुणासि	सुणाथ
उ०	सुणोमि	सुणोम	सुणामि	सुणाम

हि धातु प्राय. प (प्र) पूर्वक—पहिणोति, पहिणाति, पहिणन्ति इत्यादि।

वु (वृ) धातु—वुणाति, वुणाति, वुणन्ति इत्यादि।

कभी-कभी वणोति प्रयोग भी पाया जाता है।

मि—मिनोति, मिनाति, मिनन्ति आदि।

प पूर्वक अप (प्र आप्)

इसके रूप भी पापुणाति, पापुणन्ति तथा पापुनाति, पप्पोति इत्यादि होते हैं।

सक् (शक्) धातु

सक्कुणाति, सक्कुणन्ति इत्यादि। विकल्प से सक्कोति सक्कोति इत्यादि।

क्रयादि गण

क्रयादिगण की धातुओं में ना प्रत्यय होता है, और धातु का आदि स्वर यदि दीर्घ हो, तो ह्रस्व हो जाता है।

क्री धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	किणाति	किणन्ति
म०	किणासि	किणाथ
उ०	किणामि	किणाम

धू धातु—धुनाति, धुनन्ति इत्यादि।

लू धातु—लुनाति, लुनन्ति इत्यादि।

अस् (अश भक्षणे) धातु—अस्नाति, अस्नन्ति इत्यादि।

जा—ज्ञा धातु के स्थान में जा आदेश होता है। यथा—जानाति, जानन्ति इत्यादि।

गह—गण्हाति, गण्हन्ति, गण्हति, गण्हन्ति इत्यादि।

तथा—घेप्पति, घेप्पन्ति इत्यादि रूप भी होते हैं।

मा—मा धातु के आकार के स्थान में इकार होता है। यथा—मिनाति, मिनन्ति इत्यादि।

तनादिगण

तनादिगण की धातुओं में उ प्रत्यय (विकरण) होता है। उ के स्थान में गुण होने से ओ होता है।

तन धातु

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	तनोति	तनोन्ति
म०	तनोसि	तनोथ
उ०	तनोमि	तनोम

आत्मनेपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	तनुते	तन्वन्ते
म०	तनुसे	तनुव्हे
उ०	तन्वे	तनुम्हे

कर (कृ) धातु

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	करोति	करोन्ति, कुब्बन्ति
म०	करोसि	करोथ
उ०	करोमि	करोम

आत्मनेपद

प्र०	कुरुते	कुब्बन्ते
म०	कुरुसे	कुरुव्हे
उ०	कुब्बे	कुरुम्हे

कर धातु से उत्तर विकल्प से यिर प्रत्यय होता है, और इसके योग में कर के रकार का लोप हो जाता है। यथा—कयिरति, कयिरन्ति, कयिरसि, कयिरथ इत्यादि।

जुहोत्यादिगण

हु धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	जुहोति, जुहति	जुहोन्ति, जुहन्ति
म०	जुहोसि, जुहसि	जुहोथ, जुहथ
उ०	जुहोमि, जुहामि	जुहोम, जुहाम

कभी-कभी जुह्वति, जुह्वन्ति इत्यादि रूप भी मिलते हैं।

हा धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	जहाति	जहन्ति
म०	जहासि	जहाथ
उ०	जहामि	जहाम

दा धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	ददाति, दज्जति, देति	ददन्ति, दज्जन्ति, देन्ति।
म०	ददासि, दज्जसि, देसि	ददाथ, दज्जथ, देथ
उ०	ददामि, दज्जामि, देमि, दम्मि	ददाम, दज्जाम, देम, दम्म

धा धातु—दधाति, दधन्ति इत्यादि तथा विकल्पपक्ष में धेति, धेन्ति इत्यादि।

उपसर्ग सहित धा धातु के द्वित्व होने पर द्वितीय ध के स्थान में कभी-कभी ह होता है। यथा—पिदहति, पिदहन्ति इत्यादि। सद्दहति (श्रद्धाति), सद्दहन्ति।

चुरादिगण

चुरादिगण की धातु में अय प्रत्यय होता है, और अय के स्थान में विकल्प से ए होता है।

चुर धातु—चोरयति, चोरयन्ति, चोरेति, चोरेन्ति इत्यादि।

चिंत धातु—चिन्तयति, चिन्तेति, चिन्तयन्ति, चिन्तेन्ति आदि।

गण धातु—गणयति, गणेति, गणयन्ति, गणेन्ति आदि।

मत धातु—मन्तयति, मन्तेति इत्यादि।

विद—वेदयति, वेदेति इत्यादि तथा वेदियति, वेदियन्ति आदि रूप भी पाए जाते हैं।

घट—घाटयति, घाटेति, घटयति, घटेति आदि।

लोट्लकार

भू धातु

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	भवतु	भवन्तु
म०	भव, भवाहि	भवथ
उ०	भवामि	भवाम

आत्मनेपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	भवतं	भवन्तं
म०	भवस्सु	भवव्हो
उ०	भवे	भवामसे

भू धातु के स्थान में हू आदेश होने पर होतु, होन्तु, होहि, होथ इत्यादि रूप होंगे।

ऊपर के उदाहरणों से स्पष्ट लगा कि लोट्लकार प्रायः संस्कृत के ही समान पाली में भी होता है। मध्यम पुरुष के एकवचन में संस्कृत में केवल भव होता है, परन्तु पाली में हि का लोप विकल्प से होता है, और भवाहि रूप भी होता है। मध्यम पुरुष के बहु-वचन में पाली में भवथ होता है।

आत्मनेपद के रूप में विशेष अंतर है। उत्तम पुरुष के बहुवचन में भवामसे रूप विशेष ध्यान देने योग्य है।

अस धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अत्थु	सन्तु
म०	आहि	अत्थ
उ०	अस्मि, अम्हि	अस्म, अम्ह

गम धातु—गच्छतु, गमेतु, गमतु इत्यादि।

दिस (दृश्) धातु—पस्सतु, दिस्सतु, दक्खतु इत्यादि।

ब्रू धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	ब्रूतु	ब्रूवन्तु
म०	ब्रूहि	ब्रूथ
उ०	ब्रूमि	ब्रूम

आत्मनेपद में ब्रूतं, ब्रुवन्तं इत्यादि।

दा धातु

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	ददातु	ददन्तु
म०	ददाहि	ददाथ
उ०	ददामि	ददाम

विकल्प से देतु, देन्तु ; दज्जतु, दज्जन्तु इत्यादि रूप होते हैं।

आत्मनेपद

प्र०	ददता	ददन्त
म०	ददस्सु	ददव्हो
उ०	ददे	ददामसे

हु धातु—जुहोतु, जुहोन्तु जुहन्तु इत्यादि।

कर (कृ) धातु

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	करोतु, कुरुतु	करोन्तु, कुब्बन्तु
म०	करोहि, कुरु	करोथ
उ०	करोमि	करोम

आत्मनेपद

प्र०	कुरुतं	कुब्बन्तं
म०	कुरुस्सु कुरुस्सु	कुरुव्हो
उ०	कुब्बे	कुब्बामसे

गह (ग्रह)—गण्हतु, गण्हन्तु, गण्हाहि, गण्हथ, गण्हामि, गण्हाम इति।

जा (ज्ञा) परस्मैपद—प्र० जानातु, जानन्तु। म० जान, जानाहि, जानाथ। उ० जानामि, जानाम।

आत्मनेपद—जानतं, जानन्तं इच्चादि।

विधिलिङ्

प्रत्यय

	परस्मैपद		आत्मनेपद	
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
प्र०	एय्य, ए	एय्युं	एथ	एरं
म०	एय्यासि, ए	एय्याथ	एथो	एय्यव्हो
उ०	एय्यामि, ए	एय्याम	एय्यं, ए	एय्याम्हे

भू धातु

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	भवेय्य भवे	भवेय्युं
म०	भवेय्यासि, भवे	भवेय्याथ
उ०	भवेय्यामि, भवे	भवेय्याम

आत्मनेपद

प्र०	भवेथ	भवेरं
म०	भवेथो	भवेय्यव्हो
उ०	भवेय्यं, भवे	भवेय्याम्हे

—

भू धातु के स्थान में जब हू आदेश होता है, तब हुवेय्य, हुवेय्युं इत्यादि रूप होंगे। सर्वत्र भ के स्थान में ह हो जायगा। वैकल्पिक रूप हेय्य, हेय्युं, हेय्यासि, हेय्याथ, हेय्यामि, हेय्याम और कहीं-कहीं हुवेय्यामि भी होते हैं।

गम धातु

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	गच्छेय्य, गच्छे	गच्छेय्युं
म०	गच्छेय्यासि, गच्छे	गच्छेय्याथ
उ०	गच्छेय्यामि, गच्छे	गच्छेय्याम

इसी प्रकार गमेय्य, गमे, गमेय्युं इत्यादि।

आत्मनेपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	गच्छेथ	गच्छेरं
म०	गच्छेथो	गच्छेय्यव्हो
उ०	गच्छेय्यं, गच्छे	गच्छेय्याम्हे

वद प्रभृति धातुओं के रूप भी इसी प्रकार होंगे। केवल वद के स्थान में प्रथमपुरुष बहुवचन में वज्जु, वज्जुं तथा मध्यमपुरुष एकवचन में वज्जासि, वज्जेसि रूप भी होते हैं।

ठा (स्था) धातु

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	तिट्ठेय्य, ठेय्य	तिट्ठेय्युं, ठेय्युं
म०	तिट्ठेय्यासि, ठेय्यासि	तिट्ठेय्याथ
उ०	तिट्ठेय्यामि, ठेय्यामि	तिट्ठेय्याम, ठेय्याम

दा धातु
परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	ददेय्य, ददे	ददेय्युं
म०	ददेय्यासि	ददेय्याथ
उ०	ददेय्यामि	ददेय्याम

इसी तरह देय्य देय्युं इत्यादि रूप भी होते हैं। जब दा के स्थान में दज्ज आदेश होता है, तब दज्जेय्य, दज्जेय्युं आदि रूप होते हैं।

प्रथम पुरुष के एकवचन में दज्जा (दद्यात्), बहुवचन में दज्जुं एवं उत्तमपुरुष के एकवचन में दज्जं (दद्याम्) पद भी होते हैं।

आत्मनेपद में ददेथ, ददेरं इत्यादि रूप होते हैं। द्वित्व न होने पर देय्य, देय्युं, देय्याम आदि रूप भी होते हैं।

धा धातु के रूप—दधेय्य दधे इत्यादि होते हैं।

अपि उपसर्ग पूर्वक धा धातु के रूप होंगे—पिदहेय्य, पिदहे आदि।

नोट—संस्कृत में भागुरि आचार्य के मत से अव और अपि के अकार का लोप हो जाता है, और तदनुसार अपिधान, अवगाहन आदि के स्थान में पिधान, वगाहन आदि रूप होते हैं। अन्तर से लोप नहीं होता। अतः अकार का लोप विकल्प से होता है। यहाँ संस्कृत के प्रयोग का पाली पर यही प्रभाव पड़ा है।

हु धातु—जुहेय्य, जुहे, जुहेय्युं इत्यादि।

हा धातु—जहेय्य, जहे, जहेय्युं इत्यादि।

अस धातु (अदादिगणी)

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अस्स, सिया	अस्सु, सियुं
म०	अस्स	अस्सथ
उ०	अस्स	अस्साम

ब्रू धातु (परस्मैपद)

प्र०	ब्रुवेय्य, ब्रुवे	ब्रुवेय्युं
म०	ब्रुवेय्यासि	ब्रुवेय्याथ
उ०	ब्रुवेय्यामि	ब्रुवेय्याम

आत्मनेपद में ब्रुवेथ, ब्रुवेर मध्यम पुरुष ब्रुवेथो, ब्रुवेय्यव्हो, उत्तम पुरुष ब्रुवेय्य, ब्रुवे, ब्रुवेय्याम्हे रूप होते हैं।

तन धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	तनेय्य, तने	तनेय्यु
म०	तनेय्यासि	तनेय्याथ
उ०	तनेय्यामि	तनेय्याम

कर धातु—कृ

परस्मैपद

(क)

प्र०	करेय्य, करे	करेय्युं
म०	करेय्यासि	करेय्याथ
उ०	करेय्यामि	करेय्याम

	(ख)		(ग)	
प्र०	कयिरा	कयिरुं	कुब्बेय्य, कुब्बे	कुब्बेय्युं
म०	कयिरासि	कयिराथ	कुब्बेय्यासि	कुब्बेथ
उ०	कयिरामि	कयिराम	कुब्बेय्य	कुब्बेय्याम

नोट—करेय्यु, कयिरं और कुब्बेय्युं के स्थान में यथाक्रम करेय्युं, कयिरं और कुब्बेय्य रूप होते हैं तथा इस प्रणाली में मध्यम और उत्तम पुरुष के एकवचनों में भी कयिरा रूप होता है। यह [illegible] का मत है।

आत्मनेपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	कुब्बेथ, कुब्बेथ, कयिराथ	कुब्बेरं
म०	कुब्बेथो	कुब्बेय्याव्हो
उ०	कुब्बे, करे, करेय्यं	कुब्बेय्याम्हे

की (क्री) धातु—किणेय्य, किणे, किणेय्युं इत्यादि।

गह (ग्रह) धातु- गण्हेय्य, गण्हे, गण्हेय्युं इत्यादि।

जा (ञा) धातु- जानेय्य, जाने, जानेय्युं इत्यादि।

इसके अतिरिक्त प्रथमपुरुष में जानिया, जञ्ञा तथा जानेय्याति और उत्तमपुरुष एकवचन में जानेम रूप भी होते हैं।

छिद धातु—छिदेय्य, छिदे, छिदेय्युं इत्यादि।

या धातु—यायेय्य, यायेय्युं इत्यादि।

नहा (स्ना) न्हायेय्य, न्हायेय्युं इत्यादि।

नि+या—निय्यायेय्य, निय्यायेय्युं इत्यादि।

परोक्खा (परोक्षा)—लिट्

प्रत्यय

	परस्मैपद		आत्मनेपद	
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अ	उ	त्थ	रे
म०	ए	त्थ	त्थो	व्हो
उ०	अ	म्ह	इ	म्हे

पाली में लिट् लकार का प्रयोग बहुत कम होता है। जिस प्रकार संस्कृत में द्वित्व होता है, उसी प्रकार पाली में भी द्वित्व होता है।

पूर्ववती दीर्घ स्वर के स्थान में ह्रस्व, पूर्ववर्ती कवर्ग के स्थान में चवर्ग, वर्ग के द्वितीय और चतुर्थ वर्ण के स्थान में क्रमशः प्रथम और तृतीय वर्ण तथा हकार के स्थान में जकार इत्यादि आदेश संस्कृत के ही अनुसार पाली में भी होते हैं। व्यजनादि प्रत्यय के परे धातु के अनतर इकार आगम होता है।

भू धातु

	परस्मैपद		आत्मनेपद	
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
प्र०	बभूव	बभूव	बभूवित्थ	बभूविरे
म०	बभूवे	बभूवित्थ	बभूवित्थो	बभूविव्हो
उ०	बभूव	बभूविम्ह	बभूवि	बभूविम्हे

पच धातु

	परस्मैपद		आत्मनेपद	
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
प्र०	पपच	पपचु	पपचित्थ	पपचिरे
म०	पपचे	पपचित्थ	पपचित्थो	पपचिव्हो
उ०	पपच	पपचिम्ह	पपचि	पपचिम्हे

गम धातु

प्र०	जगम, जगाम	जगमु	जगमित्थ	जगमिरे
म०	जगमे	जगमित्थ	जगमित्थो	जगमिव्हो
उ०	जगम	जगमिम्ह	जगमि	जगमिम्हे

ब्रू धातु के प्रथमपुरुष एकवचन में आह तथा बहुवचन में आहु तथा आहसु—रूप होते हैं।

भविस्सन्ती (भविष्यन्ती) लृट्

इस लकार में संस्कृत के स्य के स्थान में स्स होता है, और प्रत्यय सब वर्त्तमान के समान होते हैं।

	परस्मैपद		आत्मनेपद	
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
प्र०	स्सति	स्सन्ति	स्सते	स्सन्ते
म०	स्ससि	स्सथ	स्ससे	स्सव्हे
उ०	स्सामि	स्साम	स्सं	स्सामहे

किसी-किसी के मत में आत्मनेपद के प्रथम पुरुष के बहुवचन में स्सरे प्रत्यय भी देखा जाता है।

लृट् लकार में धातुओं के बाद प्रायः इ होता है।

भू धातु

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	भविस्सति	भविस्सन्ति
म०	भविस्ससि	भविस्सथ
उ०	भविस्सामि	भविस्साम

आत्मनेपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	भविस्सते	भविस्सन्ते
म०	भविस्ससे	भविस्सव्हे
उ०	भविस्सं	भविस्सामहे

भू के स्थान में हू आदेश होने से निम्न-लिखित रूप होते हैं। (हू के उकार के स्थान में विकल्प से ए, एहि और ओहि आदेश होते हैं, तथा उनके बाद भविष्यत् के स्स विभक्ति का विकल्प से लोप होता है।)

	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
	(क)		(ख)	
प्र०	हेति	हेन्ति	हेस्सति	हेस्सन्ति
म०	हेसि	हेथ	हेस्ससि	हेस्सथ
उ०	हेमि	हेम	हेस्सामि	हेस्साम

	(ग)		(घ)	
प्र०	हेहिति	हेहिन्ति	हेहिस्सति	हेहिस्सन्ति
म०	हेहिसि	हेहिथ	हेहिस्ससि	हेहिस्सथ
उ०	हेहामि	हेहाम	हेहिस्सामि	हेहिस्साम
	(ङ)		(च)	
प्र०	होहिति	होहिन्ति	होहिस्सति	होहिस्सन्ति
म०	होहिसि	होहिथ	होहिस्ससि	होहिस्सथ
उ०	होहामि	होहाम	होहिस्सामि	होहिस्साम

नोट—किसी-किसी के मत से उत्तम पुरुष एकवचन में हेआमि और होयामि तथा बहुवचन में हेआम और होआम रूप भी होते हैं।

दिश (दृश्) धातु

	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
	(क)		(ख)	
प्र०	दक्खिति	दक्खिन्ति	दक्खिस्सति	दक्खिस्सन्ति
म०	दक्खिसि	दक्खिथ	दक्खिस्ससि	दक्खिस्सथ
उ०	दक्खामि	दक्खाम	दक्खिस्सामि	दक्खिस्साम
	(ग)		(घ)	
प्र०	दक्खति	दक्खन्ति	पस्सिस्सति	पस्सिस्सन्ति
म०	दक्खसि	दक्खथ	पस्सिस्ससि	पस्सिस्सथ
उ०	दक्खामि	दक्खामि	पस्सिस्सामि	पस्सिस्साम

सक धातु

सक्खिस्सति, सक्खिस्सन्ति आदि परस्मैपद।

सक्खिते, सक्खिन्ते इत्यादि आत्मनेपद।

वच—वक्खति, वक्खन्ति इत्यादि।

मुच—मोक्खति, मोक्खन्ति इत्यादि।

भुज—भोक्खति, भोक्खन्ति इच्चादि ।
वच—वच्छति, वच्छन्ति ।
रुद—रुच्छति, रोदिस्सति, रुच्छन्ति, रोदिस्सन्ति ।
लभ—लच्छति, लभिस्सति, लच्छन्ति, लभिस्सन्ति ।
गम—गच्छिस्सति, गमिस्सति, गच्छिस्सन्ति, गमिस्सन्ति ।
छिद—छेच्छति, छिन्दिस्सति, छेच्छन्ति, छिन्दिस्सन्ति ।
रुध—रुन्धिस्सति, रुन्धिस्सन्ति ।
जन—जायिस्सति, जनिस्सति, जायिस्सन्ति, जनिस्सन्ति ।
जा (ज्ञा)—ञस्सति, जानिस्सति, ञस्सन्ति, जानिस्सन्ति ।
जि—जेस्सति, जिनिस्सति, जेस्सन्ति, जिनिस्सन्ति ।
की (क्री)—केस्सति, किणिस्सति, केस्सन्ति, किणिस्सन्ति ।
सु (श्रु)—सोस्सति, सुणिस्सति, सोस्सन्ति, सुणिस्सन्ति ।
गह (ग्रह)—गण्हिस्सति, गहेस्सति, गण्हिस्सन्ति, गहेस्सन्ति ।
दा—दस्सति, ददिस्सति, दज्जिस्सति, दस्सन्ति, ददिस्सन्ति, दज्जिस्सन्ति ।

धा—धस्सति ।
अपि उपसर्ग सहित—पिदहिस्सति ।
परि पूर्वक—परिदहेस्सति ।
इ (गतौ)—एस्सति, एस्सन्ति ।
जर—जीरिस्सति, जीरिस्सन्ति ।
मर—मरिस्सति, मरिस्सन्ति ।
कर (कृ)—करिस्सति, करिस्सन्ति ।

तथा

प्र०	काहति	काहन्ति
म०	काहसि	काहथ
उ०	काहामि	काहाम

तथा

काहिति, काहिन्ति इत्यादि इकार महित भी रूप होते हैं। नह (स्ना) नहायिस्सति, नहायिस्मन्ति । परि+नि+वा धातु—परिनिब्बायिस्मति, परिनिब्बायिस्सन्ति ।

आत्मनेपद—उत्तमपुरुप एकवचन परिनिब्बिस्स ।

कालातिपत्ति (कालातिपत्तिः) लृङ्

प्रत्ययगण

	परस्मैपद		आत्मनेपद	
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
प्र०	स्सा	स्ससु	स्सथ	स्सिसु
म०	स्से	स्सथ	स्ससे	स्सव्हे
उ०	स्स	स्सम्हा	स्स	स्साम्हसे

कभी-कभी परस्मैपद प्रथमपुरुष एकवचन स्सा तथा मध्यम पुरुष एकवचन स्से के स्थान में स्स होता है। एव उत्तम पुरुष बहुवचन स्सम्हा के स्थान में स्सम्ह भी होता है।

संस्कृत के सदृश पाली में भी लृङ् लकार मे धातु मे पूर्व अकार का आगम होता है। परतु कहीं-कहीं उसका लोप भी देखा जाता है। अन्य सब कार्य लृट् के समान होते हैं।

भू धातु

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अभविस्सा, अभविस्स	अभविस्ससु
म०	अभविस्से, अभविस्स	अभविस्सथ
उ०	अभविस्स	अभविस्सम्हा, अभविस्सम्ह

अकार के लोप होने पर भविस्स, भविस्ससु आदि रूप होंगे।

आत्मनेपद

प्र०	अभविस्स	अभविस्सिसु
म०	अभविस्ससे	अभविस्सव्हे
उ०	अभविस्सं	अभविस्सामहे

गम धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अगच्छिस्सा, अगच्छिस्स	अगच्छिस्संसु
म०	अगच्छिस्से, अगच्छिस्स	अगच्छिस्सथ
उ०	अगच्छिस्सं	अगच्छिस्साम्हा

अन्यान्य धातुओं के रूप भी इसी प्रकार होंगे। यथा—

पच धातु

	परस्मैपद एकवचन	परस्मैपद बहुवचन	आत्मनेपद एकवचन	आत्मनेपद बहुवचन
प्र०	अपच्चिस्सा, अपच्चिस्स	अपच्चिस्संसु	अपच्चिस्सथ	अपच्चिस्सिंसु
म०	अपच्चिस्से, अपच्चिस्स	अपच्चिस्सथ	अपच्चिस्ससे	अपच्चिस्सव्हे
उ०	अपच्चिस्सं	अपच्चिस्साम्हा	अपच्चिस्सं	अपच्चिस्सामहे

परस्मैपद—प्रथम और मध्यम पुरुष एकवचन में क्रमशः अपच्चिस्सति और अपच्चिस्ससि रूप भी होते हैं।

हीयत्तनी (ह्यस्तनी) लङ्

प्रत्यय

	परस्मैपद एकवचन	परस्मैपद बहुवचन	आत्मनेपद एकवचन	आत्मनेपद बहुवचन
प्र०	आ, अ	ऊ, उ	त्थ, थ	त्थुं
म०	ओ, अ	त्थ	से	व्हं
उ०	अ, अं	म्हा	इं	म्हसे

लङ् लकार—परस्मैपद में क्रमशः प्रथमपुरुष एकवचन

आ के स्थान मे अ, बहुवचन ऊ के स्थान में उ और उं, मध्यम-पुरुष एकवचन ओ के स्थान में अ, तथा उत्तमपुरुष एकवचन अ के स्थान मे अं भी होते हैं। ये रूप बहुत कम पाए जाते हैं।

लङ् लकार मे भी धातु मे पूर्व अकार आगम होता है। कभी-कभी इस अकार का लोप भी होता है।

भू धातु

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अभवा, अभव	अभवू, अभवुं
म०	अभवा	अभवत्थ
उ०	अभव, अभवं	अभवम्हा

आत्मनेपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अभवत्थ	अभवत्थु
म०	अभवसे	अभवव्हं
उ०	अभवि	अभवम्हसे

भू धातु के स्थान मे हू आदेश होने पर ये रूप होंगे—

	परस्मैपद		आत्मनेपद	
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अहुवा	अहुव अहुवु	अहुवत्थ	अहुवत्थुं
म०	अहुवो	अहुवत्थ	अहुवसे	अहुवव्हं
उ०	अहुवं	अहुवम्हा	अहुवि	अहुवम्हसे

पच धातु

	परस्मैपद		आत्मनेपद	
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अपचा	अपचू	अपचत्थ	अपचत्थुं

	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
म०	अपचो	अपचत्थ	अपचसे	अपचव्हं
उ०	अपच, अपचं	अपचम्हा	अपचिं	अपचम्हसे

गम धातु

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अगच्छा, अगमा	अगच्छु, अगमु
म०	अगच्छा, अगमा	अगच्छत्थ, अगमत्थ
उ०	अगच्छ, अगच्छं, अगम, अगमं	अगच्छम्हा, अगमम्हा

आत्मनेपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अगच्छत्थ, अगमत्थ	अगच्छथुं, अगमथुं
म०	अगच्छसे, अगमसे	अगच्छव्हं, अगमव्हं
उ०	अगच्छिं, अगमिं	अगच्छम्हसे, अगमम्हसे

दिस धातु (दृश्) प्रथमपुरुष एकवचन अदसा अथवा अदिस्सा ; उत्तमपुरुष एकवचन अद्दस, अदस ।

वच धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अवचा, अवच	अवचू, अवचु
म०	अवचो, अवच	अवचत्थ
उ०	अवच, अवचं	अवचम्हा

श्रु धातु—अस्सुणा, अस्सुणु इत्यादि ।

कर धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अकरा, अकर	अकरू
म०	अकरो	अकरत्थ, अकरं
उ०	अकर, अकरं	अकरम्हा, अकरम्ह

आत्मनेपद—प्रथमपुरुष एकवचन अकरत्थ, बहुवचन अकरत्थु ; मध्यमपुरुष एकवचन अकरसे, बहुवचन अकरव्ह, उत्तमपुरुष एकवचन अकरिं, बहुवचन अकरम्हसे ।

दा धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अददा	अददुं
म०	अददो	अददित्थ
उ०	अदद	अददम्हा

इसमे विकल्प से द्वित्व होता है ; द्वित्व न होने के पक्ष में ये रूप होंगे—

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अदा	अदुं
म०	अदो	अदित्थ
उ०	अद	अदम्ह

आत्मनेपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अददत्थ	अददत्थुं
म०	अददसे	अददव्ह
उ०	अददिं	अददम्हसे

अज्जतनी (अद्यतनी)

पाली में भूतकाल-मात्र को द्योतित करने के लिये प्रायः लुङ् का ही प्रयोग किया जाता है । यही कारण है कि पाली भाषा में जिस प्रचुरता से लुङ् का प्रयोग पाया जाता है, उस प्रकार अन्य किसी भाषा में नहीं मिलता । सस्कृत मे भूतकाल के लिये लङ्, लिट् और लुङ् तीन लकार हैं। पाली में लिट् का प्रयोग तो प्रायः नहीं के बराबर है । लङ् का प्रयोग भी विरल है । अनेक स्थलो मे लङ् और

लुट् प्रायः मिल-से गए हैं। इसलिये भूतकाल का भार अकेले लुङ् को ही निर्वहन करना पड़ता है। संस्कृत में लुङ् प्रक्रिया कठिन है। च्लि का लोप, क्स, अङ्, चङ् इत्यादि प्रभेदों से उसमें अनेक प्रकार हैं। पाली में भी संस्कृत का प्रभाव पड़ा ही है। और इसमें भी सामान्यतः नहीं, तो विशेष स्थलों में अवश्य ही संस्कृत के रूपों के अनुसार तारतम्य देखा जाता है।

विभक्ति

	परस्मैपद		आत्मनेपद	
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
प्र०	ई, इ	उ, इंसु, इसुं	आ, इत्थ	ऊ
म०	ओ, इ	इत्थ	से	इव्हं
उ०	इं	इम्हा, इम्ह	अ, अं	इम्हे

व्यंजनादि विभक्ति के परे धातु से उत्तर प्रायः इकार आगम होता है।

धातु से पूर्व विकल्प से अ का आगम होता है। परस्मैपद में कभी-कभी स्वरान्त धातु से परे निम्न-लिखित विभक्ति मिला देने ही से साधारण लुङ् का पद बन जाता है-

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	सि	सुं
म०	सि	सित्थ
उ०	सिं	सिम्हा, सिम्ह

व्यंजनान्त धातु से उत्तर कभी-कभी ये सब विभक्तियाँ पाई जाती हैं।

भू धातु

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अभवी, अभवि	अभवुं, अभविंसु

	एकवचन	बहुवचन
म०	अभवो, अभवि	अभवित्थ
उ०	अभवि	अभविम्हा, अभविम्ह

आत्मनेपद

प्र०	अभवा, अभवित्थ	अभवू
म०	अभविसे	अभविव्हे
उ०	अभव, अभव	अभविम्हे

आदि में अकार का आगम विकल्प से होता है। उसके अभाव में भवी, भवि, भवुं, भविंसु इत्यादि रूप होंगे।

भू के स्थान में हू होने से इस प्रकार रूप होंगे।

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अहोसि, अहू	अहेसुं, अहवुं
म०	अहोसि	अहोसित्थ
उ०	अहोसि, अहुं	अहोसिम्ह, अहुम्ह

पच धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अपची, अपचि	अपचुं, अपचिंसु
म०	अपचो, अपचि	अपचित्थ
उ०	अपचिं	अपचिम्हा, अपचिम्ह

गम धातु

(क)

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अगच्छि	अगच्छुं, अगच्छिंसु
म०	अगच्छो, अगच्छि	अगच्छित्थ
उ०	अगच्छि	अगच्छिम्हा, अगच्छिम्ह

(ख)

प्र०	अगमी, अगमि, अगमासि	अगमु, अगमिसु, अगमिंसु
म०	अगमो, अगमि	अगमित्थ, अगमुत्थ
उ०	अगमि	अगमिम्हा, अगमिम्ह, अगमुम्ह

(ग)

प्र०	अगच्छि	अगच्छु, अगच्छिंसु
म०	अगच्छो, अगच्छि	अगच्छित्थ
उ०	अगच्छिं	अगच्छिम्हा, अगच्छिम्ह

(घ)

लुङ् लकार में गम धातु के स्थान में विकल्प से गा आदेश होता है, उस दशा में इसके रूप इस प्रकार होते हैं—

परस्मैपद

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अगा	अगुं
म०	अगा	अगुत्थ
उ०	अगं	अगम्हा

लभ धातु—इसके प्रथम और उत्तम पुरुष के एकवचनों के प्रत्ययों के स्थान में विकल्प से त्थ और त्थं होता है। यथा—

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अलत्थ, अलभि	अलभिंसु, अलभिंसु
म०	अलभि	अलभित्थ
उ०	अलत्थं, अलभिं	अलभिम्हा

दिश (दृश्)

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अदस्सी, अदसि	अदसिंसु

	एकवचन	बहुवचन
म०	अपस्सि	अपस्सित्थ
उ०	अपस्सिं	अपस्सिम्ह

पस्स आदेश न होने पर ये रूप होंगे—

प्र०	अदक्खि	अदक्खिसु, अदक्खुं
म०	अदक्खासि	अदक्खासुं
उ०	अदक्खासि	अदक्समु, अदक्मुं

सक (शक्) धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	असक्खि	असक्खिंसु
म०	असक्खि	असक्खित्थ
उ०	असक्खिं	असक्खिम्ह

कुश (क्रुश) धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अक्कोसि, अक्कोच्छि	अक्कोसिसु, अक्कोच्छिंसु
म०	अक्कोसि, अक्कोच्छि	अक्कोसित्थ, अक्कोच्छित्थ
उ०	अक्कोसि	अक्कोसिम्ह

गह (ग्रह) धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अगण्हि, अग्गहि, अग्गहेसि	अगण्हिसु अग्गहिसु, अग्गहेसुं
म०	अगण्हि, अग्गहि, अग्गहेसि	अगण्हित्थ, अग्गहित्थ, अग्गहेत्थ
उ०	अगण्हिं, अग्गहिं, अग्गहेसिं	अगण्हिम्ह, अग्गहिम्ह, अग्गहेम्ह

रुध धातु—अरुन्धि, अरुन्धिमु इत्यादि।

छिद—अच्छिन्दि, अच्छिन्दिंसु।

तथा अच्छिज्जि, अच्छिज्जिंसु।

नि+सद धातु—निसीदि निसीदिंसु, निसीदिसुं।
भास (भाष)—अभासि अभासिंसु।

अस धातु (अज्जतनी)

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	आसि	आसुं, आसिंसु
म०	आसि	आसित्थ
उ०	आसि	आसिम्ह

वच धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अवोच	अवोचुं, अवोचु
म०	अवोचो	अवोचुत्थ
उ०	अवोचिं	अवोचुम्ह।

ब्रू धातु—अब्रुवी, अब्रुवि अब्रुवुं इत्यादि।
हन—अवधि, अहनि अवधिंसु, अहनिंसु।
हा—अजहासि, अजहि अजहुं, अजहासिंसु।
दा—अददि, अदज्जि, अदासि अदंसु, अददिंसु अदज्जिंसु, अदंसु।
भ—अधासि अधंसु इत्यादि।
पि+धा—पिदहि पिदहिंसु इत्यादि।
ठा धातु—अट्ठासि अट्ठंसु इत्यादि।
सं+ठा—सण्ठहि सण्ठहिंसु इत्यादि।
पा—अपिवि, अपासि अपिविंसु, अपंसु।
ञा (ज्ञा)—अजानि, अञ्ञासि अजानिंसु अञ्ञासुं।
जि—अजिनि, अजेसि अजिनिंसु, अजेसुं।
हि—अहिणि अहिणिंसु।
प+हि—पाहेसि पाहेसुं।

प+आप (प्राप्)—पापुणि पापुणिंसु।
नी—अनयि अनयिंसु।
हु—अजुव्हि, अजुहोसि अजुव्हिंसु, अजुहोसुं।

कर (कृ) धातु

	एकवचन	बहुवचन
	(क)	
प्र०	अकरि	अकरिंसु, अकंसु, अकरु
म०	अकरि	अकरित्थ
उ०	अकरि	अकरिम्ह
	(ख)	
प्र०	अकासि	अकासुं
म०	अका	अकासित्थ
उ०	अकासि	अकासिम्ह
	आत्मनेपद	
प्र०	अकासित्थ	अकासु
म०	अकासिसे	अकासिव्हे
उ०	अकासुं	अकासिम्हे

चुरादिगणी धातुओं के तथा णिजंत धातुओं के लुङ् के रूप करने में अय् के स्थान में ए हो जायगा और फिर लुङ् के प्रत्यय होंगे। यथा—

चुर धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अचोरेसि	अचोरेसुं
म०	अचोरेसि	अचोरेसित्थ
उ०	अचोरेसिं	अचोरेसिम्ह

मन्त धातु

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	अमन्तेसि	अमन्तेसुं
म०	अमन्तेसि	अमन्तेसित्थ
उ०	अमन्तेसिं	अमन्तेसिम्ह

उप + नम (णिजन्त)

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	उपनामेसि	उपनामेसुं
म०	उपनामेसि	उपनामेसित्थ
उ०	उपनामेसिं	उपनामेसिम्ह

भू (णिजन्त)

	एकवचन	बहुवचन
प्र०	भावेसि	भावेसुं
म०	भावेसि	भावेसित्थ
उ०	भावेसिं	भावेसिम्ह

णिजन्त

संस्कृत में प्रेरणार्थक धातुओं में णिच् प्रत्यय होता है। पाली में भी अय और आपय प्रत्यय होते हैं। इन प्रत्ययों के बाद धातु में यथासंभव गुण और वृद्धि होते हैं। संस्कृत के णिच् के स्थान में भी अय् होता है, उसके अनुसार पाली में रूप होता है। संस्कृत में कुछ णिजन्त धातुओं को ([illegible] आदि) पुक् आगम होता है, और तदनुसार अर्पयति, ह्रेपयति, दापयति आदि रूप होते हैं। पाली में इनके अनुकरण में प्रायः सर्वत्र ही वैकल्पिक आप प्रत्यय होता है।

कर धातु

	एकवचन	बहुवचन
	(क)	
प्र०	कारयति	कारयन्ति
म०	कारयसि	कारयथ
उ०	कारयामि	कारयाम
	(ख)	
प्र०	कारापयति	कारापयन्ति
म०	कारापयसि	कारापयाथ
उ०	कारापयामि	कारापयाम

जैसा कि पूर्व में कहा गया है, पदान्तर्गत अय के स्थान में कभी-कभी ए हो जाता है, तदनुसार णिजन्त में जब अय के स्थान में ए और आपय के स्थान में आपे हो जायँगे, तो दो प्रकार के रूप और होंगे। यथा—

	एकवचन	बहुवचन
	(ग)	
प्र०	कारेति	कारेन्ति
म०	कारेसि	कारेथ
उ०	कारेमि	कारेम
	(घ)	
प्र०	कारापेति	कारापेन्ति
म०	कारापेसि	कारापेथ
उ०	कारापेमि	कारापेम

अन्यान्य लकार भी इसी प्रकार होंगे।

पच धातु—पाचयति, पाचेति, पाचापयति, पाचापेति।

गुह—गूहयति, गूहेति।

दुस—दूसयति, दूसेति।

गम—गमयति, गामयति, गामेति, गच्छापयति, गच्छापेति।

सम—समयति, समेति।

जन—जनयति, जनेति।

नियम—नियामयति, नियामेति।

घट—घटयति, घटेति, घटापयति, घटापेति।

बुध—बोधयति, बोधेति, बुज्झापयति, बुज्झापेति।

गह—(ग्रह)—गाहयति, गाहेति, गाहापयति, गाहापेति,

गण्हापयति, गण्हापेति।

हा—जहापयति, जहापेति, हापयति, हापेति।

दा—दापयति, दापेति।

अपि+धा—पिधापयति, पिधापेति, पिदहापयति, पिदहापेति।

हु—जुहापयति, जुहापेति, जुहावेति।

सु (श्रु)—सावयति, सावेति।

जि—जयापयति, जयापेति।

चुर—चोरापयति, चोरापेति।

चिन्त—चिन्तापयति, चिन्तापेति।

सन्नन्त

किसी क्रिया की इच्छा होने पर—इच्छार्थक सन् प्रत्यय धातु के बाद होता है। जुहोत्यादि गण के समान सन् के पर द्वित्वादि कार्य होते हैं। यहाँ यह स्मरण रखना चाहिए कि कर्ता क्रिया की इच्छा अपने लिये करेगा तभी सन् होगा। अन्य के लिये क्रिया की इच्छा करने में सन् न होगा। जैसे गोविंद. पिपासति—अर्थात् गोविंद पीने की इच्छा स्वयं करता है और यदि अन्य किसी के लिए इस बात की इच्छा गोविंद करे, तो 'पिपासति' यह प्रयोग न होगा। सन् के परे द्वित्व होने पर पूर्वनिर्दिष्ट ह्रस्व, दीर्घ, संधि-कार्य आदि यथावत होंगे। धातु

सन्नंत के रूप किस प्रकार संस्कृत-सन्नंत का अनुकरण करते हैं, इसका पता निम्न-लिखित तुलना से ज्ञात होगा। यथार्थ में पाली में स्वतन्त्र रूप से सन्नंत की उत्पत्ति प्रतीत नहीं होती, प्रत्युत संस्कृत-सन्नंत रूप से ही, आवश्यक परिवर्तन के अनंतर, पाली सन्नंत तैयार होता है। यह बात नहीं है कि पाली में सन्नंत का प्रयोग अत्यंत विरल है; परंतु जितनी स्वतंत्रता से अन्य रूप पाली में हैं, उतनी स्वतन्त्रता इसमें नहीं है, और फलतः पाली के सन्नंत को संस्कृत के सन्नंत का पूर्ण रूप से मुखापेक्षी होना पड़ता है। जिन धातुओं से (तितिक्षति प्रभृति) संस्कृत में स्वार्थ में सन् होता है, उन्हीं धातुओं से पाली में भी स्वार्थ में सन् होता है।

	संस्कृत-सनंत	पाली
भुज् धातु	बुभुक्षति	बुभुक्खति
घस् (अद्)	जिघत्सति	जिघच्छति
श्रु	शुश्रूषति (ते)	सुस्सूसति
पा	पिपासति	पिवासति
जि	जिगीषति	जिगिसति
हृ	जिहीर्षति	जिगिसति

जि और हृ (हर), दोनों के स्थान में पाली में गि आदेश होता है। स्वार्थ में सन् नीचे लिखी धातुओं से होता है—

तिज्	तितिक्षति (ते)	तितिक्खति
गुप्	जुगुप्सति (ते)	जिगुच्छति
कित्	चिकित्सति	चिकिच्छति, तिकिच्छति
मान्	मीमांसते	वीमंसते

सन्नंत धातु से णिच् होने पर भी पूर्ववत् अय् और आपय होंगे। यथा—

तिज्—तितिक्खयति, तितिक्खापयति

कित्—तिकिच्छयति, तिकिच्छेति, तिकिच्छापयति, तिकिच्छापेति

भुज्—बुभुक्खयति, बुभुक्खापयति

यङ्न्त और यङ्लुगन्त

क्रिया का बार-बार होना अथवा अतिशय होना, इसे सूचित करने के लिये संस्कृत में यङ् तथा यङ्लुक् होते हैं। श्री विधु-शेखर भट्टाचार्य लिखते हैं कि 'पाली-व्याकरण में इस सम्बन्ध में विशेष सूत्र न देखे जाने पर भी तत्सदृश कुछ प्रयोग देखे जाते हैं।' यथार्थ में जहाँ विशेष सूत्र उपलब्ध होते भी हैं वहाँ भी प्रायः संस्कृत के रूपों में ही परिवर्तन होकर पाली रूप दिखाई देता है। मूल धातु से पाली में इन रूपों को सिद्ध करना अस्वाभाविक होगा।

कुछ उदाहरण उद्धृत किए जाते हैं—

ज्वल धातु पाली में दल हो जाती है। अतः पाली में दाद्दल्लति रूप होता है—संस्कृत में—जाज्वल्यति (ते)।

क्रम (कम—पाली)—सं०—चङ्क्रमीति

पाली—चङ्कमति

गम— सं०—जङ्गमीति

पाली—जङ्गमति

चल— सं० —चञ्चलीति

पाली—चञ्चलति

लप— सं०—लालप्यति (ते) लालपीति

पाली—लालप्पति, लालपति

नाम धातु

नाम (संज्ञा) से तद्वत् आचरण करने में जो क्रियाएँ बनती हैं, वे नाम धातु कहलाती हैं। इस प्रकार के नियम पाली में प्रायः संस्कृत के समान होते हैं—

पब्बत (पर्वत) के समान हो जाना=पब्बतायति
समुद्द " " " =समुद्दायति
धूम " " " =धूमायति

ये उदाहरण हुए जब उपमान कर्ता था—समुद्र इव आचरति इत्यादि।

परंतु जब उपमान कर्म होगा, अर्थात् पुत्रमिव आचरति शिष्यः=पुत्रीयति; पुत्त=पुत्तीयति; छत्त=छत्तीयति।

अपनी निजी इच्छा किसी वस्तु के प्राप्त करने के लिये होने पर इच्छार्थक धातु के कर्मभूत शब्द से उत्तर ईय होता है।

अत्तनो पत्तं (पात्रं) इच्छति=पत्तीयति।

अत्तनो वत्थं (वस्त्र) इच्छति=वत्थीयति।

चीवर=चीवरीयति।

पट=पटीयति।

पुत्त=पुत्तीयति इत्यादि।

दलहं करोति = दलहयति, पमाणं करोति = पमाणयति आदि प्रयोग सकृस्त के समान होते हैं।

कर्म और भाववाच्य

संस्कृत के समान पाली में भी क्रियाओं में कर्मवाच्य, भाववाच्य और कर्मकर्तृवाच्य प्रत्यय होते हैं। कर्म की प्रधानता रहने से—अभिहित होने पर—जब वह प्रथमा में होता है, तब क्रिया में कर्मवाच्य प्रत्यय होते हैं—जैसे देवदत्त अन्न पकाता है; जब अन्न अभिहित होकर प्रथमा में होगा, तब यह रूप होगा—अन्न देवदत्त से पकाया जाता है। यह कर्मवाच्य सकर्मक धातुओं में होता है। अकर्मक धातुओं में जब केवल भाव अर्थात् क्रिया-मात्र द्योतित करना अभीष्ट होता है, उस समय कर्ता अप्रधान हो जाता है—जैसे मैं सोता हूँ, मुझसे सोया जाता है। कभी-कभी कर्म ही कर्ता के रूप में आकर क्रिया करता है। इस प्रकार

के प्रयोग को कर्मकर्तृ प्रयोग कहते हैं—जैसे चावल पकता है, रस्सा चलता है आदि। संस्कृत के अनुसार पाली में भी इन तीनों प्रकारों में यकार होता है, और फिर साधारण वल्ल के नियमों के अनुसार यथासम्भव संधिकार्य आदि होते हैं। पाली में, संस्कृत से भिन्न—कर्म और भाववाच्य परस्मैपद और आत्मनेपद, दोनों पदों में प्रयुक्त होते हैं।

यथा—पच्चयते—पच्चते, पच्चति।

बुध्यते—बुज्झते, बुज्झति।

उच्यते—उच्चते, उच्चति,

वुच्चते, वुच्चति।

य प्रत्यय होने पर सभी धातुओं से परे विभक्ति और यकार से पूर्व इकार आगम होता है। यथा—

तुद धातु (तुद्)—तुज्जते, तुदियति।

पुच्छ (पृच्छ)—पुच्छते, पुच्छियति।

दंस (दंश)—दस्सते, दसियति।

भञ्ज—भञ्जते, भञ्जियति।

सुप (स्वप)—सुप्पते, सुपियते।

नन्द—नन्दियते।

मह—महीयति।

मथ—मथीयति।

निम्न-लिखित रूप भी ध्यान देने योग्य हैं—

इ धातु—ईयते; ञा—ञायते; सु—सूयते।

भू—भूयते; लू—लूयते; पू—पूयते।

जन—जायते, जञ्जते; तन—तायते, तञ्जते।

वह—उय्हते, वुय्हति; यज—इज्जते, वच—वुच्चते, वुच्चते।

इस (इष)—इस्सते, इस्सति, एसीयति, इच्छीयति।

दिस (दृश)—दिस्सति, पस्सीयति, दक्खीयति ।

यम—यमीयति, यच्छीयति ।

गम—गच्छीयति, गच्छीयते ।

वद—वज्जीयति, वदीयति ।

नि + सद—निसज्जते ।

दा—दीयते; पा—पीयते, ठा—ठीयते,

मा—मायते, हा—हीयते; धा—धीयते ।

कर—करीयति, करिय्यति, करिय्यते, कयिरति, कय्यति ।

जर—जीरीयति, जीय्यति ।

चुर—चोरियति ।

चिन्त—चिन्तयति ।

भू—णिच्-कर्मवाच्य—भावीयति ।

अन्यान्य लकार यथानियम विभक्ति (प्रत्यय) आदि के योग से होंगे। उदाहरणार्थ पच धातु के रूप भिन्न-भिन्न लकारों में दिए जाते हैं।

पच धातु

प्रथमपुरुष

	परस्मैपद		आत्मनेपद	
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
लट्	पचति	पचन्ति	पचते	पचन्ते
विधिलिङ्	पचे, पचेय्य	पचेय्युं	पचेथ	पचेरं
लोट्	पचतु	पचन्तु	पचतं	पचन्तं
लङ्	अपचा	अपचु	अपचत्थ,	अपचथ, अपचत्थुं
लिट्	पपच	पपचु	पपचित्थ	पपचिरे
लृट्	पचिस्सति	पचिस्सन्ति,	पचिस्सते	पचिस्सन्ते

	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
लृङ्	अपचिस्सा,	अपचिस्संसु,	अपचिस्सथ	अपचिस्सिंसु
	अपचिस्स	अपचिंसु		
लुङ्	अपचि,	अपचिंसु	अपचित्थ	अपचरुं
	पचि	पचिंसु	पचित्थ	पचरुं

भू धातु—णिजंत-कर्मवाच्य

प्रथमपुरुष

	परस्मैपद		आत्मनेपद	
	एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
लट्	भावीयति	भावीयन्ति	भावीयते	भावीयन्ते
विधि०	भावीयेय्य	भावीयेय्युं	भावीयेथ	भावीयेरं
लोट्	भावीयतु	भावीयन्तु	भावीयतं	भावीयन्तं
लङ्	अभावीया	अभावीयु	अभावीयथ	अभावीयत्थुं
लृट्	भावीयिस्सति	भावीयिस्सन्ति	भावीयिस्सते	भावीयिस्सन्ते
लृङ्	अभावीयिस्सा	अभावीयिस्संसु	अभावीयिस्सथ	अभावीयिस्सिंसु
लुङ्	अभावीयि	अभावीयिंसु	अभावीयित्थ	अभावीयिरू

अव्यय

संस्कृत के समान पाली में भी उपसर्गों की बहुलता है। धातु के संयोग में उनमें क्या परिवर्तन होता है, यह पूर्व में लिखा जा चुका है। यहाँ केवल उनका परिगणन-मात्र किया जाता है।

प्र	प	पबज्जा (प्रव्र.)	पग्गहो ([illegible])
परा		पराजितो,	पराभवो
अप		अपमानो,	अपेतो
सम्		समागमो,	सन्धि
अनु		अनुमतो,	[illegible], [illegible]

अव		अवत्था ओतरण, ओवारो
निस् निर्	नी	निग्गतो, निज्झरो, नीहरणं, नीहारो
दुस् दुर्		दुग्गमं, दूहारः
वि		विवट्टो, विचित्तं, वीतिहारो, वीतिक्कमो
आङ्		आवासो, अक्कोसो (आक्रोशः), अञ्ञ (आज्ञातः)
नि		
अधि		अधिसीलो, अज्झायो (अध्यायः)
अपि		अपिधानं
अति		अतीतो, अच्चन्तं (अत्यन्तं)
सु		सुग्गहीतो,
उत्		उग्गच्छति, उप्पन्नो
अभि		अब्भागमनं (अभ्यागमनं), अब्भन्तर
प्रति	पति	पटिबद्धो, पतिरूप, पच्चेकं, पटिभानं
परि		परिवुतो, परियादान (पर्यादानं), पयिरु पासति (पर्युपासति)
उप		उपसग्गो, उपेक्खा

सर्वनाम घटित अव्यय—

किं	कुहिं, कुहिञ्चनं, कुहं, कह, क, कुत्र, कुत्थ, कत्थ, किस्मिञ्चि
तत्	तहिं, तह, तत्र, तत्थ
यत्	यहिं, यत्र, यत्थ
इदम्	इह, इध
एतद्	अत्र, अत्थ, एत्थ

सर्व	सब्बत्र, सब्बत्थ, सब्बधि
पर	परत्र, परत्थ
अन्य	अञ्ञत्र, अञ्ञत्थ
इतर	इतरत्र, इतरत्थ
अदस्	अमुत्र, अमुत्थ

संस्कृत में जिस प्रकार पञ्चमी, सप्तमी, तृतीया प्रभृति में तस् होता है (और वह सार्वविभक्तिक तसिल् कहलाता है), इसी प्रकार पाली में भी होता है।

कुतो, ततो, यतो, इतो, एतो, अतो, सब्बतो, पुरिमतो, दक्खिणतो, भिक्खुनितो—इत्यादि।

कालवाचक अव्यय—

किं—कदा, कुदाचन

तत् (त)—तदा, तदानि, तर्हि

यत् (य)—यदा

सर्व (सब्ब)—सब्बदा

इदम् (इम)—अधुना, इदानि, एतरहि

अन्य (अञ्ञ)—अञ्ञदा

एक—एकदा

प्रकारवाचक—

तथा—तथत्त, यथा—यथत्त; इत्थं—सब्बथा, [illegible], अञ्ञथा।

विभक्ति के अर्थ को प्रकाशित करनेवाले अव्यय—

प्रथमार्थ—अत्थि, सक्का (शक्य), लब्भा (लभ्य)। सम्बोधनार्थ—समणगण को सम्बोधित करने में आवुसो शब्द का प्रयोग होता है; तथा भंते श्रेष्ठों के लिये आता है; हीन व्यक्ति के सम्बोधन में रे, अरे, हरे आदि शब्द प्रयुक्त होते हैं। दासी प्रभृति के सम्बोधन में जे शब्द का प्रयोग होता है।

तृतीयार्थ—सयं (स्वय), साम (स्वयं), सं (स्वं), सम्मं, सम्मा (सम्यक्)।

सप्तम्यर्थे—समन्ता, सामन्ता, समन्तो (समन्तात्), परितो, अभितो, एकज्झं (एकत्र), एकमन्तं (एकान्ते), हेट्ठा (अधस्तात्), उपरि, तिरियं (तिर्यक्), सम्मुखा, परम्मुखा (पराङ्मुख), आवि (आविः=प्रकाशः), रहो, तिरो, अन्तो, अज्झत्त (अध्यात्म), बहिद्धा (बहिर्धा), बाहिरा, बाहिरं (बहिः, बाह्य), ओरं (अवर, अस्मिन् पक्षे), पारं (परस्मिन् पक्षे), आरा, आरका (आरात् दूरे), पच्छा (पश्चात्), दूरं (परत्र), पुरे (पुरः), पेच्च (प्रेत्य)।

कालवाची—सम्पति (सम्प्रति), आयति (भविष्यत्काले), अज्ज (अद्य), अपरज्जु (अपरेद्युः), परज्जु (परद्युः), सुवे, स्वे (श्वः), उत्तरसुवे (उत्तरश्वः), हिय्यो (ह्यः), परे, सज्जु (सद्यः), सायं, पातो (प्रातः), काल, कल्लं (कल्य), दिवा, रत्त, निच्चं (नित्य), सततं, अभिण्हं, अभिक्खणं (अभीक्ष्णं), मुहुं (मुहुः), मुहुत्तं (मुहूर्तः), भूतपुब्ब (भूतपूर्व), पुरा इत्यादि।

अन्यान्य अव्ययगण—

अङ्ग—	संबोधन
अञ्ञदत्थु—	अन्यदस्तु
अत्थ—	अस्त (अदर्शन)
अत्थि—	अस्ति
अत्थु—	अस्तु
अद्धा—	एकांश, एकान्त
अप्पेव—	अप्येवं (संशय-द्योतक)
अप्पेव नाम—	अप्येवं नाम (संशय-सूचक)

অথক্কং— অপ্রকৃত

অস্তু— পদ-পূরক

আম— (আম. হাঁ, স্বীকৃতি-বোধক)

ইঙ্ঘ— প্রেরণা-প্রবর্তনা

ইস— ঈষৎ, অল্প, মন্দ

ইসক— ,, ,, ,,

উদ— উত (বিকল্প বোধক)

উদাহু— উতাহো ,,

এত্তাবতা— এতাবতা

এন— এতন্

আপথিক— সম্মতি-সূচক

কচ্চি— কচ্চিৎ (স্বাভিপ্রায়-প্রকাশক)

কিং ন— কি তন্

কিণু— কিস্বিৎ (প্রশ্নদ্যোতক)

কিঞ্চি— কিঞ্চিৎ

কিত্তাবতা— কিয়তা, কিতনা

কির— কিল

কীব— কিয়ৎ

খরহি— তর্হি (পদ-পূরণার্থক)

খো— খলু

চে— চেৎ

ত— তৎ

তম্ম— এখন, তখন (নিরর্থক)

তথবি— তথৈব

তাবতা— তাবতা ততটা

তুণ্হি— তূষ্ণীম্, মৌন

सुट्ठु—	सुष्ठु, सुन्दर
न—	(एनं) तत्
पगे—	प्रगे, प्रातः
पतिरूपं—	प्रतिरूप, उचित, समान
पन—	पुनः
परसवे—	परश्वः, परसों
पसय्ह—	प्रसह्य (बलपूर्वक)
पुथु—	पृथक्
पुनप्पुन—	पुनः-पुनः, बार-बार
पुरत्था—	पुरस्तात्, आगे
बलव—	बलवत्
मनं—	मनाक्, थोड़ा
मुसा—	मृषा, झूठ
य०—	यत्
यग्घे—	पद-पूरणार्थक
यथरिव—	यथेव
यावता—	यावता, जितना (परिमाण)
लहुं अथवा लहु—	लघु, शीघ्र, सम्प्रति (निश्चय)
वथ और वत—	वत पदपूरणार्थक
विय—	इव (उपमासूचक)
विसुं—	अलग होना
वे—	वै (निश्चयात्मक)
सचे—	चेत्, तच्चेत्
सच्छि—	साक्षी, शाक्षात्, प्रत्यक्ष
सद्धं—	श्रद्धं, श्रद्धायुक्त
सद्धिं	सार्द्धं, साथ

सनिकं—	शनकैः, शनैः, धीरे से
सम्मा—	सम्यक्, सुंदर
ससक्क—	एकान्त, निश्चय
सहसा, साहसा—	हठात्, अचानक
सामि—	सामि, अर्ध, आधा
साहु—	साधु
सुद—	पदपूरक
सुवत्थि—	स्वस्ति (मंगलसूचक)
सुवे—	श्वः
सेय्यथापि—	तद्यथापि
सेय्यथीदं—	तद्यथेदं
ह—	ह, पदपूरक
हवे—	हवै, (निश्चयात्मक)

कृदंत

संस्कृत में वर्तमानकाल द्योतित करने के लिये परस्मैपदी धातुओं से शतृ प्रत्यय तथा आत्मनेपदी से शानच् होता है। पाली में शतृ के स्थान में अन्त तथा शानच् के स्थान में आन अथवा मान होता है। भविष्यत्काल में संस्कृत में स्यतृ होता है। उसके स्थान में पाली में स्सं वा स्सन्तु होता है। यहाँ यह ध्यान देने योग्य है कि जिस प्रकार संस्कृत में परस्मैपदी में शतृ और आत्मनेपदी में शानच् होता है, वैसा नियम पाली में नहीं है। बिना किसी विशेषता के दोनों पदों में ही ये सब प्रत्यय देखे जाते हैं।

अन्त तथा स्सं और स्सन्तु प्रत्यय जिनके अन्त में होते हैं, उन शब्दों के रूप गच्छन्त शब्द के समान होते हैं, और आन और मान प्रत्ययान्त शब्दों के रूप बुद्ध शब्द के समान होंगे।

गम धातु—गम+अन्त = गच्छ, गच्छन्तो, गम+मान = गच्छमानो , गम+स्सन्तु = गमिस्स ।

कर धातु—कुब्बन्तो, करोन्तो, कुरुमानो, करानो, करिस्स

भुञ्ज— भुञ्जन्तो, भुञ्जमानो, भुञ्जानो, भुञ्जिस्स

खाद— खादन्तो, खादमानो, खादानो, खादिस्सं

चर— चरन्तो, चरमानो, चरानो, चरिस्सं

अस धातु—मान = समानो

सुभ (शुप्)—मान=सुम्भमानो

अन्त, अन्तु और स्सन्तु प्रत्ययांत से स्त्रीलिंग में ई प्रत्यय होता है और तब अन्त आदि के नकार का विकल्प में लोप होता है। यथा—गच्छती, गच्छन्ती, करिस्सती, करिस्सन्ती। इन शब्दों के रूप इत्थी शब्द के समान होंगे।

आन और मान प्रत्ययांत शब्द के स्त्रीलिंग में आ प्रत्यय होता है और कञ्ञा शब्द के समान रूप होते हैं।

नपुंसकलिंग में चित्त शब्द के समान रूप होते हैं।

तावी प्रत्यय

कर्तृवाच्य में भूतकाल द्योतित होने पर, सब धातुओं से तावी प्रत्यय होता है, और उसके परे निष्ठा प्रत्यय के समान कार्य होते हैं। जैसे—भुक्तवान् इस अर्थ में भुज धातु से भुत्तावी होता है। हु धातु से हुतावी तथा वस धातु से वुसितावी। तावी और वक्ष्यमाण आवी प्रत्यय जिनके अंत में रहते हैं, उन पदों के रूप दण्डी शब्द के समान होते हैं।

आवी प्रत्यय

किसी क्रिया के करने का किसी मनुष्य का स्वभाव (शील) हो अथवा उस क्रिया को वह सरलतया अच्छे प्रकार से कर सकता हो (साधुकारी) इन दोनों अर्थों में (तच्छील और तत्साधुकारी

अर्थ में) पाली में धातु के अनंतर आवी प्रत्यय होता है। यथा—भयं पस्सितुं सीलं यस्स (भय द्रष्टुं शील यस्य)—अथवा स्वभावतः ही जो मनुष्य भय देखता है अथवा सर्वत्र निष्कारण भी भय देखने का जिसका स्वभाव है, उसके लिये भयदस्सावी पद का प्रयोग होगा। इसी प्रकार भय दिखाने में जो साधुकारी होगा, कुशल होगा, वह भी भयदस्सावी कहलाएगा।

तावी और आवी प्रत्ययात शब्दों के स्त्रीलिंग में इनी प्रत्यय होता है। यथा—हुतावी—हुताविनी, भुत्तावी—भुत्ताविनी; वुसितावी—वुसिताविनी; भयदस्सावी—भयदस्साविनी।

ऊ प्रत्यय

कर्तृवाच्य में शील आदि उपर्युक्त अर्थ में—पार प्रभृति उपपद-पूर्वक गम धातु, उपपद-पूर्वक ज्ञानार्थक विद धातु, तथा उपसर्ग अथवा अन्य कोई उपपद—सहित ञा (ज्ञा) धातु के बाद ऊ प्रत्यय होता है। यथा—पारगू (सम्कृत पारग), लोकविदू (लोकवित), विञ्ञू (विज्ञः), सब्बञ्ञू (सर्वज्ञः) इत्यादि।

त, तवन्तु (निष्ठा)

संस्कृत के क्त और क्तवतु के स्थान में यथाक्रम त और तवन्तु प्रत्यय पाली में होते हैं। इन प्रत्ययों के होने पर धातुरूपों में यथा-संभव संस्कृत के समान कार्य होते हैं।

त प्रत्ययात शब्द के रूप अकारांत शब्द के समान तथा तवन्तु प्रत्ययात के गुणवन्तु के समान होंगे।

हु + त = हुतो; हु + तवन्तु—हुतवा। वच + त = उत्तो वच + तवन्तु = उत्तवा। वस + त = उत्थो, वुत्थो, वसितो, वुसितो, वसितो। वज + त = विट्ठो।

भञ्ज + त=भग्गो, नत (नृत्) + त—नच्चं, हुस (हृष्) + त—हुट्ठं, बुध (बुध्) + त = बुद्धो, जगि+नट+त = [illegible]

रुद + त—रोदितं, रोण, रुण्ण, परि + कत (कृत्—कर्तने)+त= परिकत्त; दा + त = दत्तं, दिन्न; धा+त = हित, धातं; मुह+त= मुल्हो; गुह+त=गुल्हो; वह+त=उल्हो।

आस+त=आसीनो; चर+त=चरित्रो, चिण्णो।

कृत्य प्रत्यात

संस्कृत के कृत्य प्रत्यात पद साधारण परिवर्तन के साथ पाली में भी व्यवहृत होते हैं। पाली क्रियाओं से प्रत्यय करने की अपेक्षा संस्कृत कृत्य प्रत्यात से पाली में परिवर्तन करना विशेष सुकर और युक्ति-संगत होगा।*

भू—सं० भवितव्य पा० भवितब्बं—तव्यत्
,, भवनीय ,, भवनीय—अनीयर

और भी उदाहरण निम्न-लिखित हैं—

उप्पजितब्ब, उप्पजनीयं
सयितब्ब, सयनीय
बुज्झितब्ब, बुज्झनीय
सुणितब्ब, सवणीय
गण्हितब्ब गण्हनीय
पत्तब्बं, पापुनणीय, पापणीयं

ण्यत्	हृ धातु—सं०	हार्यं	पाली—	हारियं
	कृ— ,,	कार्यं	,,	कारियं
	लभ— ,,	लभ्य	,,	लब्भ
	शास (सास्)—	शास्यं	,,	सिस्सो

* परन्तु कहीं-कहीं पाली की विशेषता भी दृष्टिगोचर होती है। संस्कृत में जहाँ श्रोतव्यम् होता है, पाली में विकरण-सहित सुणितब्बं प्रयोग होता है।

भू— भाव्यं भवं
दा— देय्य, मा—मेय्य
कृ— (कृत्य) कच्च
भृ— (भृत्य) भच्च

तव्यत् के स्थान में पाली में एक और प्रत्यय तब्ब भी पाया जाता है—ञातब्बं, दट्ठब्ब, पत्तब्ब इत्यादि।

त्वा, त्वान, तून (क्त्वा)

पूर्वकालिक क्रिया में संस्कृत में क्त्वा (समास में उपसर्ग रहने पर ल्यप्) होता है। पाली में उसके स्थान में त्वा, त्वान और तून होते हैं। इनमें से तून का प्रयोग पाली में विरल है। वह प्राकृत में अधिकतर पाया जाता है।

कर (कृ)—कत्वा, करित्वा, कत्वान, कत्तून
गम—गन्त्वा, गन्त्वान, गन्तून
हन—हन्त्वा, हन्त्वान, हन्तून
सु (श्रु)—सुत्वा, सुणित्वा
जि—जित्वा, जेत्वा, जिनित्वा
प—आप (सं० प्राप) पत्वा, पापुणित्वा
दिस (दृश)—पस्सित्वा।
हा—जहित्वा, जहत्वा, जहित्वान
छिद—छिन्त्वा, छेत्वा, छिन्दित्वा
भिद—भिन्दित्वा
दा—दत्वा, ददित्वा

य (ल्यप्)

संस्कृत के ल्यप् के बदले पाली में य होता है, [illegible] किन्तु जिस प्रकार धातु से पूर्व उपसर्गादि की स्थिति आवश्यक है, [illegible] पाली में नहीं है। पाली में जहाँ त्वा होता है, उसी स्थान में [illegible]

य होता है, चाहे उपसर्ग हो या न हो। संस्कृत में उपसर्ग-पूर्वक धातु मे अवश्य ही ल्यप् होता है, किंतु पाली में उस स्थल में भी त्वा देखा जाता है। इस तरह यह स्पष्ट है कि त्वा और य के लिये पाली में नियम नहीं है, रामायण महाभारतादि की संस्कृत में भी ल्यप् का अनियमित प्रयोग पाया जाता है और उपसर्ग-पूर्वक से ही ल्यप् हो यह आवश्यक नहीं है। गृह्य आदि प्रयोग वहुत मिलते हैं और आर्ष-प्रयोग कहकर इनका समाधान किया जाता है।

वन्द—वन्दिय; अभिपूर्वक—अभिवन्दिय, अभिवन्दित्वा, उप+नी+य—उपनीय, उपनेत्वा, नि+सि (श्रि)+य=निस्साय (निःश्रित्य), निस्सित्वा।

आकारान्त धातु से परवर्ती यकार का कभी-कभी लोप होता है—अभिञ्ञा (अभिञ्ञाय—अभिज्ञाय), अनुपा+दा+य=अनुपादा (अनुपादाय); पटिसंखा (प्रतिसंख्याय)।

तुं तवे इत्यादि

संस्कृत के तुमुन् के स्थान में पाली में तुं और तवे प्रत्यय होते हैं। 'तवे' यह प्रयोग वैदिक संस्कृत से लिया गया है; परंतु पाली में आते-आते इसका प्रयोग विरल हो गया है।

कर+तुं=कत्तुं, कातुं।
मन+तुं=मन्तुं, मनितुं।
हन+तु=हन्तुं, हनितुं।
सु (श्रु)—तुं—सोतुं, सुणितुं।
जि—जेतु, जिनितुं।
भुज—भोत्तुं, भुञ्जितुं।
प+हा—पजहितुं, पहातुं।
ञा—ञातुं, जानितुं।
गह—गहेतं; गण्हितुं।

तवे—

कर+तवे=कत्तवे, कातवे।

नी—नेतवे।

वि+हा—विप्पहातवे।

नि+धा—निधातवे।

कहीं-कहीं तुम् अर्थ में ताये और तुये प्रत्यय भी देखे जाते हैं। यथा—दिस (दृश्)+ताये=दक्खिताये; गण+तुये=गणेतुये; मर (मृ)+तुये=मरितुये।

समास-प्रकरण

समास-प्रकरण पाली में भी प्रायः संस्कृत के ही समान है। समास के भेद भी प्रायः समान हैं, परन्तु कहीं-कहीं पाली में संस्कृत के नियम से विपरीत प्रकार के समास भी देखे जाते हैं। इनका विवेचन नीचे किया जाता है। पाली और संस्कृत में प्रधान अन्तर है, संधि-विषयक नियम में। संस्कृत में 'संहितैकपदे नित्या नित्या धातूपसर्गयोः। नित्या समासे वाक्ये तु सा विवक्षामपेक्षते'* इस नियम के अनुसार समास में संधि होना आवश्यक है, परन्तु पाली में कभी-कभी इस नियम का पालन नहीं होता। यथा—'[illegible]' '[illegible] जनपद—[illegible]' '[illegible]—[illegible] वेगजनित हलाहलसद्द' 'इति [illegible] पालितु' इत्यादि।

संस्कृत के समान पाली में भी द्वन्द्व, तत्पुरुष (इसी के अंतर्गत कर्मधारय और द्विगु), [illegible] और बहुव्रीहि ये समास के भेद हैं। संस्कृत के व्याकरण-ग्रंथों में इनका विवेचन पूर्णतया किया

---

* अर्थात् एक ही पद में, धातु और उपसर्ग में तथा समास में संहिता (संधि) नित्य होती है। केवल वाक्य में संहिता बोलनेवाले की इच्छा पर निर्भर है, चाहे संधि करे चाहे न करे।

गया है। यहाँ उन सब नियमों के उल्लेख करने की आवश्यकता नहीं है। केवल विशेष-विशेष नियमों का ही यहाँ विवेचन होगा।

अव्ययीभाव में, पाली और संस्कृत में कोई अंतर नहीं है। उपगंग, अनुरथ यावजीवं इत्यादि प्रयोग सब संस्कृत के आधार पर हैं। संस्कृत में अप परि बहि आदि अव्ययों के योग में पंचमी का विकल्प से लोप होता है। यह वैकल्पिक रूप भी पाली में उसी प्रकार स्वतंत्र रूप से व्यवहृत होता है। यथा अपपब्बता अथवा अपपब्बतं; बहिगामा अथवा बहिगाम इत्यादि।

तत्पुरुष

द्वितीया तत्पुरुष—अरञ्ञं + गतो—अरञ्ञगतो; सुखं—प्राप्तः सुखप्राप्तः।

तृतीया तत्पुरुष (ततिय तप्पुरिस)—बुद्धभासितो।

वि-जुगरहितो, सुकाहट, जच्चंधो।

कहीं-कहीं मध्यम पद का लोप हो जाता है। यथा—

गुलेन संसट्ठो ओदनो—गुलोदनो।

अस्सेन युतो रथो—अस्सरथो।

चतुर्थी तत्पुरुष (चतुत्थी तप्पुरिस)—

संघभत्त, बुद्धदेय्य।

पञ्चमी तत्पुरुष (पञ्चमी तप्पुरिस)—

नगरम्हा निग्गतो—नगरनिग्गतो।

रुक्खस्मा पतितो—रुक्खपतितो।

सासनम्हा चुतो—सासनचुतो।

चोरा भीतो—चोरभीतो।

पापभीरुको, पापजिगुच्छि, बन्धनमोक्खो।

षष्ठी तत्पुरुष—इसमें प्रथम पद में स्थित दीर्घ ई और ऊ प्रायः ह्रस्व हो जाते हैं।

नदिया तीरं—नदितीरं।

भिक्खुनीनं संघो—भिक्खुनिसङ्घो।

नरानं उत्तमो—नरुत्तमो।

सत्तमी तत्पुरुष (सत्तमी तप्पुरिस)

अरञ्ञे वासो—अरञ्ञवासो।

धम्मरतो; वनचरो; थलट्ठो, पब्बतट्ठो इत्यादि।

अलुत्त तप्पुरिस—इसमें पूर्व पद की विभक्ति का लोप नहीं होता—संस्कृत में इन्हें अलुक् समास कहते हैं—

पभङ्करो; परस्सपदं; अत्तनोपदं; कुतोजो; अन्तेवासिको; उरसिलोमो।

कम्मधारय

(१) कर्मधारय समास में विशेषण महन्त के स्थान में महा हो जाता है। (स्मरण रहे कि संस्कृत में भी यह होता है) और यदि परवर्ती व्यंजन को द्वित्व होता है, तो महा न होकर मह होता है।

महन्तो पुरिसो—महापुरिसो।

महन्ती नदी—महानदी।

महन्तं भयं—महब्भयं।

(२) सन्त (संस्कृत—सत्) शब्द के स्थान में पाली में स होता है।

(३) यदि कर्मधारय के दोनों पद स्त्रीलिंगान्त रहते हैं, तो पूर्व स्त्रीलिंग पद को पुंवद्भाव होता है। अर्थात् वहाँ उसके पुल्लिंग का रूप होता है।

(४) संस्कृत के समान पाली में भी नञ् के नकार के स्थान में व्यंजन से पूर्व अकार तथा स्वर से पूर्व अन होता है। यथा

असच्चं, अप्पमादो, अनत्थो, अनुदकं।

(५) कुत्सित और हीन अर्थ को द्योतित करनेवाले कु के स्थान में व्यञ्जन से पूर्व क और स्वर से पूर्व कद् होता है।

द्विगु

द्विगु समास के दो भेद हैं—

(१) समाहार द्विगु—यह समूहवाचक होने के कारण सामान्यतः एकवचन और नपुंसकलिंग में होता है।

(२) असमाहार—इसमें समूह का ज्ञान न होकर उतने संख्यक व्यक्तियों का बोध होता है।

समाहार द्विगु—

तिलोकं—तीन लोकों का समूह।

तिरतनं—सत्ताह, पञ्च सिक्खा पद।

चतुसच्चं, द्विरत्त, पञ्चगवं।

असमाहार

तिभवा—तीन जन्म—पृथक्-पृथक्।

चतुदिसा—पञ्चिन्द्रियाणि।

सकटसतानि—चतुस्सतानि, द्विसतसहस्सानि।

द्वंद्व

द्वंद्व समास में दोनों पद समान रूप से सामर्थ्य रखते हैं। द्वंद्व समास दो प्रकार के हैं। एक वह, जिसमें दोनों पद पृथक्-पृथक् अपना महत्त्व रखते हैं, और समस्त पद का वचन दोनो पदों के संयुक्त वचन के अनुसार होता है। दूसरा प्रकार है, समाहार द्वंद्व। इसमें दोनो पद मिलकर एक समूह का द्योतन करते हैं, अतः नपुंसक लिंग (सामान्यतः) और एकवचन में प्रयुक्त होते हैं। प्राणि के अंग, सेनाग आदि अनेक अर्थों में यह समाहार द्वंद्व होता है। इसका विवेचन संस्कृत-व्याकरण में विशदतया किया गया है। प्रायः संस्कृत के आधार पर ही संस्कृत पदों से ही पाली में भी परिवर्तन होते हैं, और इसलिये यहाँ उन सब संस्कृत के नियमों के उल्लेख करने की आव-

श्यकता नहीं है। इसी प्रकार द्वन्द्व में किस पद का प्रयोग पूर्व में होगा, किसका पर में होगा, इसके भी नियम संस्कृत में हैं, तदनुसार ही पाली में प्रयोग होते हैं, इसलिये उन नियमों का उल्लेख करना यहाँ विस्तार-भय से उचित नहीं प्रतीत होता। उदाहरण—

(१) समणा च ब्राह्मणा च समणब्राह्मणा।
देवा च मनुस्सा च देवमनुस्सा।
अग्गी च धूमो च अग्गिधूमा।
धम्मो च अत्थो च धम्मत्था।

(२) मुखनासिक, छविमंसलोहित।
जरामरण, हत्थपाद, हत्थस्स।

बहुव्रीहि (बहुब्बीहि)

बहुव्रीहि समास अन्यपदप्रधान होता है। अर्थात् बहुव्रीहि में जो दो पद समस्त होते हैं, उनके अतिरिक्त एक तीसरे व्यक्ति का बोध होता है। जैसे सुन्दर+अश्व का यदि घोड़ा का द्योतित करेगा, तो सुन्दराश्व यह कर्मधारय समास होगा। परन्तु यही यदि न तो सुन्दर को द्योतित करेगा और न अश्व को, प्रत्युत उस पुरुष अथवा उस रथ को, जिसके अथवा जिसमें सुन्दर अश्व हों, तो सुन्दर और अश्व के अतिरिक्त एक तृतीय व्यक्ति को द्योतित करने के कारण बहुव्रीहि समास हुआ। बहुव्रीहि विशेषण हो जाता है, अतः विशेष्य के अनुसार उसके लिंग वचन होते हैं।

यहाँ भी पाली में प्रायः कोई विशेषता नहीं है और व्यवहार के आधार पर समास हुए शब्दों में परिवर्तन होकर पाली रूप बनते हैं, इसलिये उसका विशेष उल्लेख यहाँ नहीं किया जाता।

जिस प्रकार संस्कृत में स्त्रीलिंग पूर्वपद के पुंवद्भाव होने के नियम हैं, जिस प्रकार धर्म आदि शब्दों से अनिच् आदि [illegible]

का विधान है, उसी प्रकार पाली में भी संस्कृत का अनुकरण किया गया है। समास-प्रकरण में पाली की मौलिकता का प्राय: अभाव-सा है। बहुव्रीहि समास के कुछ उदाहरण नीचे दिए जाते हैं—

बहुजनो गामो; 'दीघजङ्घा इत्थी; दीघजङ्घो पुरिसो ; महापञ्ञो ; पञ्चक्खधम्मा; विसुद्धसीलो जनो; द्विमूलो रुक्खो, जितिन्द्रियो समणो; विजितमारो भगवा ; छिन्नमुख पुरिसो, छिन्नहत्थो पुरिसो इत्यादि।

उपपद-समास

ये भी बिलकुल संस्कृत के आधार पर स्थित हैं। यथा—कुम्भकारो; ब्रह्मचारी ; रथकारो इत्यादि। समासांत प्रत्ययों के लिये भी संस्कृत ही आधार है।

कारक और विभक्ति

पाली का कारक-प्रकरण भी प्राय: संस्कृत के समान ही है। कहीं-कहीं थोड़ा-सा अंतर है। सप्तमी के स्थान में कभी-कभी द्वितीया का प्रयोग होता है। यथा—एकं समयं भगवा सावत्थियं विहरति। पञ्चाहसमयं निवासेत्वा, एकं अन्तं इत्यादि।

कभी-कभी सप्तमी के स्थान में तृतीया होती है। यथा—तेन खो पन-समयेन भगवा एतदवोच (तस्मिन् खलु पुनः समये भगवान् एतदवोचत्); येन भगवा तेनुपसङ्कमिंसु—यत्र भगवान् तत्र उपसमक्रामिषु: षष्ठी का प्रयोग बहुलता से होता है। तेलस्स ददाति (तेल देता है) यहाँ कर्म के स्थान में षष्ठी का प्रयोग है।

कभी-कभी सप्तमी के स्थान में षष्ठी होती है, यदि किसी विषय में कुशलता द्योतित करनी हो। यथा कुशला नच्च गीतस्स।

अन्य कारक संस्कृत के समान होते हैं।

तद्धित-प्रकरण

धातुओं से साक्षात् प्रत्यय लगकर जो प्रातिपदिक बनते हैं, वे कृत्

प्रत्ययान्त कहलाते हैं। प्रातिपदिक से अपत्य इत्यादि अर्थ में प्रत्यय लगकर जो दूसरे प्रातिपदिक बनते हैं, वे तद्धित प्रत्ययान्त कहलाते हैं। संस्कृत में तद्धित प्रत्ययों का बहुत विस्तार से वर्णन किया गया है। पाली में प्रायः संस्कृत प्रत्ययान्त से परिवर्तन होता है, परन्तु कहीं-कहीं पाली के रूप में भी प्रत्यय होते हैं। ऐसे कुछ प्रत्ययों का विवेचन नीचे किया जाता है, जिन्हें तद्धित प्रत्ययों की विशेषता देखनी हो, वे मूल संस्कृत में अवलोकन करें।

जात—उत्पन्न आदि अर्थ में इम प्रत्यय होता है। यथा- पच्छा (पश्चात) +इम=पच्छिमो (संस्कृत पश्चिमः)
अन्त+इम=अन्तिमो, मज्झ+इम=मज्झिमो।
हेट्ठा+इम=हेट्ठिमो।

संस्कृत में योग्य अर्थ में कृदंत प्रत्यय अनीय होता है, जैसे वन्द धातु से वन्दन करने योग्य अर्थ में वन्दनीय होता है। परन्तु इसी प्रकार 'स्थान'वाचक होने पर वन्दन इत्यादि पदों में पाली में ईय प्रत्यय होता है, जैसे बन्धन का स्थान बन्धनीय कहलाता है। मदन का स्थान मदनीय, मोचनस्स (मोचनस्य)+ईय=मोचनीयः उपादान+ईय=उपादानीय।

कुछ प्रत्यय ऐसे भी मिलते हैं, जो केवल पाली के समझे जा सकते हैं। न तो संस्कृत में उनकी समानता पाई जाती है, और न बाद की भाषाओं में ही कहीं उनका पता लगता है। ऐसे प्रत्ययों में से एक प्रत्यय है आयितत्त। उपमा सूचित होने पर उपमावाची शब्द से उसका आयितत्त प्रत्यय होता है। यथा— धुवो विय दिस्सति इति धुमायितत्त इसी प्रकार [illegible] होता है। संस्कृत में आचारार्थक क्यङ् प्रत्यय होकर [illegible] होता है। धूम इव आचरति धूमायते। [illegible] होता है इसी [illegible] पर धूमायते से धुमायितत्त रूप बनता है।

'वह उससे आश्रित' अथवा 'वह उसका स्थान है' इस अर्थ में पाली में ल्ल प्रत्यय होता है। दुट्ठु निस्सित अथवा दुट्ठु ठानं इस अर्थ मे दुट्ठुल्ल रूप होता है। इसी प्रकार वेदनिस्सितं अथवा वेदस्सठानं इस अर्थ मे वेदल्ल होता है।

भावार्थक त्व के अर्थ में पाली मे त्तन प्रत्यय होता है। पुथुज्जनस्स भावो (पृथग्जनस्य भावः) पुथुज्जनत्तनं।

एव—वेदनस्स भावो—वेदनत्तनं।

इसी अर्थ में पाली में ण्य प्रत्यय भी होता है। दासव्य।

एय्य प्रत्यय भी कहीं-कहीं होता है। यथा आलसेय्य।

निर्धारणार्थक प्रत्यय तरप् तमप् और इष्ठन् के समान पाली मे तर तम और इट्ठ के अतिरिक्त इस्सिक तथा इय प्रत्यय भी होते हैं। यथा—पापतरो, पापतमो, पापिस्सिको, पापियो, पापिट्ठो, पटुतरो, पटुतमो, पटिस्सिको, पटियो, पटिट्ठो।

संस्कृत मे 'इतने बार' द्योतित करने के लिये संख्यावाचक शब्द से कृत्वसुच् (कृत्वः) प्रत्यय होता है। जैसे कोई मनुष्य दिन में पाँच बार भोजन करता है, तो उसके लिये प्रयोग होगा पञ्चकृत्वः अह्नो भोजनम्। पाली में इस कृत्व. के स्थान मे क्खत्तुं होता है। पञ्चकृत्वः के स्थान में पाली में पञ्चक्खत्तुं होगा। इसी तरह एकक्खत्तुं, द्विक्खत्तुं, तिक्खत्तुं इत्यादि प्रयोग होंगे।

संस्कृत मे लोम शब्द से श प्रत्यय होकर लोमश शब्द बनता है, और उसका अर्थ होता है अधिक रोमवाला। उसी के ढंग पर पाली में भी लोमसो रूप तो होता ही है, अन्यान्य शब्दो से भी 'स' प्रत्यय इसी अर्थ में पाया जाता है। यथा मेधासो।

स्त्रीप्रत्यय

अन्य प्रकरणों के समान इस प्रकरण में भी पाली के ही कुछ विशेष नियमों का उल्लेख किया जाता है।

संस्कृत में इन् प्रत्ययांत शब्दों में ई प्रत्यय (ङीप्) होता है, यथा—ब्रह्मचारिन्=ब्रह्मचारिणी; वजिन्=वजिनी; मनस्विन्=मनस्विनी। पाली में भी इन् प्रत्ययांतों में तो ई प्रत्यय होता ही है, परंतु प्रायः अन्य इकारांत उकारांत शब्दों में भी नी प्रत्यय होता है। कहीं-कहीं ई और इनी दोनों प्रत्यय होते हैं, यथा—हत्थि=हत्थिनी। बन्धु=बन्धुनी। भिक्खु=भिक्खुनी। पटु=पटुनी। यक्ख=यक्खिनी। नाग=नागिनी। सीह=सीही, सीहिनी। मिग=मिगी, मिगिनी। वर्तमान हिंदी में भी इस नी का प्रभाव पड़ा है, और जिस प्रकार संस्कृत में आचार्यानी, इंद्राणी, भवानी आदि स्त्रीप्रत्ययांत पद होते हैं, उसी के आधार पर पाली में गहपति से गहपतानी आदि प्रयोग पाए जाते हैं, और हिंदी में पण्डितानी आदि प्रयोगों का मूल इसी में मिलता है।

पाली में बहुत से शब्दों में आ और ई तथा इनी तीनों प्रत्यय पाए जाते हैं।

यथा—मानुस=मानुसा, मानुसी, मानुसिनी। कुम्भकार=कुम्भकारा। कुम्भकारी। यक्ख=यक्खी, यक्खिनी।

अत्थकाम=अत्थकामा, अत्थकामी, अत्थकामिनी।



पाठावली

धम्म पद से

योच वस्ससतं जन्तु अग्गि परिचरे वने ;
एकञ्च भावितत्तानं मुहुत्तमपि पूजये।
सा येव पूजना सेय्या यञ्चे वस्ससतं हुत ;
अभिवादनसीलस्स निच्चं वद्धापचायिनो।
चत्तारो धम्मा वड्ढन्ति आयु वण्णो सुखं बल,
यो च वस्ससत जीवे दुस्सीलो असमाहितो।
एकाहं जीवितं सेय्यो पञ्ञावन्तस्स झायिनो ;
सब्बे तसन्ति दण्डस्स सब्बे भायन्ति मच्चुनो।
अत्तानं उपमं कत्वा न हनेय्य न घातये ;
सुखकामानि भूतानि यो दण्डेन विहिंसति।
अत्तनो सुखमेसानो पेच्च सो न लभते सुखं ;
अत्ता हि अत्तनो नाथो को हि नाथो परो सिया।
अत्तना हि सुदन्तेन नाथं लभति दुल्लभं ;
न हि वेरेन वेरानि सम्मन्तीध कुदाचन।
अवेरेन च सम्मन्ति एस धम्मो सनन्तनो ;
सेलो यथा एकघनो वातेन न समीरति।
एवं निन्दापसंसासु न समिञ्जन्ति पण्डिता ;
कोधं जहे विप्पजहेय्य मान संयोजन सब्बमतिक्कमेय्य।
तं नामरूपस्मिं असज्जमान अकिञ्चनं नानुपतन्ति दुक्खा ;

यो वे उप्पतितं कोधं रथं भन्तं व धारये ।
तमहं सारथिं ब्रूमि रस्मिग्गाहो इतरो जनो ।
अक्कोधेन जिने कोधं असाधुं साधुना जिने ।
जिने कदरियं दानेन सच्चेन अलिकवादिनं ।
न तेन थेरो होति येनस्स फलितं सिरो ।
परिपक्को वयो तस्स मोघजिण्णोति वुच्चति ।
यम्हि सच्चं च धम्मो च अहिंसा संयमो दमो ।
स वे वन्तमलो धीरो थेरोति पवुच्चति ।
सब्बे सङ्खारा अनिच्चाति यदा पञ्ञाय पस्सति ।
अथ निब्बिन्दती दुक्खे एस मग्गो विसुद्धिया ।
दिवा तपति आदिच्चो रत्तिं आभाति चन्दिमा ।
सन्नद्धो खत्तियो तपति झायी तपति ब्राह्मणो ।
अथ सब्बमहोरत्तं बुद्धो तपति तेजसा ।
न जटाहि न गोत्तेन न जच्चा होति ब्राह्मणो ।
यम्हि सच्चं च धम्मो च सो सुची सो च ब्राह्मणो ।

धम्मपद की टीका से उद्धृत

न पुप्फगन्धो पटिवातमेति न चन्दनं तगरमल्लिका वा ।
सतं च गन्धो पटिवातमेति सब्बा दिसा सप्पुरिसो पवाति ।
चन्दनं तगरं वापि उप्पलं अथ वस्सिकी ।
एतेसं गन्धजातानं सीलगन्धो अनुत्तरो ति ।

तत्थ न पुप्फगन्धोति तावतिंसभवने पारिच्छत्तको [illegible] विरयारतो न [illegible] योजनसतिको तस्स पुप्फानं आभा पञ्ञास योजनानि गच्छति. गन्धो योजनसतं. सोपि अनुवातं एव. पटिवातं पन [illegible] गन्तुं न सक्कोति. एवरूपो पि न पुप्फगन्धो पटिवातं एति । चन्दनं ति चन्दनगन्धो । तगरमल्लिका वाति इमेसं पि गन्धो एव [illegible],

सारगन्धान अग्गस्स लोहितचन्दनस्सापि तगरमल्लिकाय पि अनुवातं एव याति नो पटिवात । सतञ्च गन्धो ति सप्पुरिसानं पन बुद्धपच्चेक-बुद्धसावकान सीलगन्धो पटिवात एति । किङ्कारणा ? सब्बा दिसा सप्पुरिसो पवाति यस्मा सप्पुरिसो सीलगन्धेन सब्बा दिसा अज्झोत्थ-रित्वा गच्छति तस्मा तस्स गन्धो पटिवातमेतीति वत्तब्बो, तेन वुत्त पटिवातमेति ति । वस्सिकी ति जातिसुमना । एतेस ति इमेस चन्दना-दीनं गन्धजातानं गन्धतो सीलवन्तान सप्पुरिसान सीलगन्धो व अनुत्तरो असदिसो अप्पटिभागो ति ।

देसनावसाने बहू सोतापत्तिफलादीनि पत्ता, देसना महाजनस्स सात्थिका जाता ति ।

बालनक्खत्तघुट्ठवत्थु

एकस्मि हि समये सावत्थियं बालनक्खत्त नाम घुट्ठं, तस्मिं नक्खत्ते बालदुम्मेधजना चारिकाय चेव गोमयेन च सरीरं मक्खेत्वा सत्ताह असब्भं भणन्तो विचरन्ति; तस्मिं ञातिसुहज्जे वा पब्बजित वा दिस्वा लज्जन्तो नाम नत्थि, द्वारे ठत्वा असब्भ भणन्ति, मनुस्सा तेस असब्भ सोतुं असक्कोन्ता यथाबल अड्ढ वा कहापण वा पेसेन्ति; ते तेस घरे लद्ध लद्धं गहेत्वा पक्कमन्ति । तदा पन सावत्थिय पञ्च-कोटिमत्ता अरियसावका, ते सत्थु सतिक पेसयिंसु: भगवा भन्ते सत्ताहं भिक्खुसघेन सद्धिं नगर अपविसित्वा विहारे येव होतू ति । तं च पन सत्ताह भिक्खुसघस्स विहारे येव यागुभत्तादीनि सम्पादेत्वा सय पि गेहा न निक्खमिंसु । नक्खत्ते पन परियोसिते अट्ठमे पन दिवसे बुद्धपमुखं भिक्खुसघं निमन्तेत्वा नगरं पवेसेत्वा महादानं दत्वा एकमन्त निसिन्ना, 'भन्ते अतिदुक्खेन नो सत्त दिवसा अतिक्कन्ता बालान असब्भानं सुणन्तान कण्णा भिज्जनाकारप्पत्ता होन्ति, कोचि कस्सचि न लज्जति, तेन मय तुम्हाक अन्तो नगरं पविसितुं न दम्ह, मयं पि गेहतो न निक्खमिम्हा' ति आहंसु । सत्था तेसं कथ

सुत्वा 'बालानं दुम्मेधानं किरिया नाम एवरूपा होति, मेधाविनो पन धनसारं विय अप्पमादं रक्खित्वा अमतमहानिब्बानसम्पत्तिं पापुणन्ति' वत्वा इमा गाथा अभासि—

पमादं अनुयुञ्जन्ति बाला दुम्मेधिनो जना ;
अप्पमादं च मेधावी धनं सेट्ठं व रक्खति ।
मा पमादं अनुयुञ्जेथ मा कामरतिसन्थवं ;
अप्पमत्तो हि झायन्तो पप्पोति विपुलं सुखं ति ।

निर्वाण

यथा हि लोके दुक्खस्स पटिपक्खभूतं सुखं नाम अत्थि, एवं भवे सति तप्पटिपक्खेन विभवेनापि भवितब्बं, यथा च उण्हे सति तस्स वूपसमभूतं सीतम्पि अत्थि, एवं रागादीनं अग्गीनं वूपसमेन निब्बानेनापि भवितब्बं । यथा पापकस्स लामकस्स धम्मस्स पटिपक्खभूतो कल्याणो अनवज्जधम्मोपि अत्थि येव, एवमेव पापिकाय जातिया सति सब्बजातिक्खेपनतो अजातिसङ्खातेन निब्बानेनापि भवितब्बमेवा ति तेन वुत्तं—

"यथापि दुक्खे विज्जन्ते सुखं नामपि विज्जति ,
एवं भवे विज्जमाने विभवोपि इच्छितब्बको ।
यथापि उण्हे विज्जन्ते अपरं विज्जति सीतलं ,
एवं तिविधग्गि विज्जन्ते निब्बानं इच्छितब्बकं ।
यथापि पापे विज्जन्ते कल्याणमपि विज्जति
एवं जातिम्हि विज्जन्ते अजातिम्पि इच्छितब्बकन्ति ।"

यथा नाम गूथरासिम्हि निमुग्गेन पुरिसेन दूरतो पञ्चवण्ण-पदुमसञ्छन्नं महातळाकं दिस्वा 'कतरेन नु खो मग्गेन एत्थ गन्तब्ब'न्ति तं तळाकं गवेसितुं युत्तं, यं तस्स अगवेसनं न सो तळाकस्स दोसो, एवं किलेसमलधोवने अमतमहानिब्बानतळाके विज्जन्ते तस्स अगवेसनं न अमतमहानिब्बानतळाकस्स दोसो । यथा हि चोरे

हि संपवारितो पुरिसो पलायनमग्गे विज्जमानेपि स चे न पलायति, न सो मग्गस्स दोसो पुरिसस्सेव दोसो; एवमेव किलेसेहि परिवारेत्वा गहितस्स पुरिसस्स विज्जमाने येव निब्बानगामिम्हि सिवे मग्गे, मग्गस्स अगवेसनं नाम न मग्गस्स दोसो, पुग्गलस्सेव दोसो । यथा च व्याधिपीलितो पुरिसो विज्जमाने व्याधितिकिच्छके वेज्जे, सचे त वेज्जं गवेसित्वा व्याधिन्न तिकिच्छापेति, न सो वेज्जस्स दोसो; एवमेव यो किलेसव्याधिपीलितो किलेसवूपसमनमग्गकोविद विज्जमानमेव आचरिय न गवेसति, तस्सेव दोसो, न किलेसविनासकस्स आचरियस्साति ।

तेन वुत्तं—

यथा गूथगतो पुरिसो तलाक दिस्वान पूरितं ;
न गवेसति त तलाक न दोसो तलाकस्स सो ।
एवं किलेसमलधोवे विज्जन्ते अमतन्तले ;
न गवेसति त तलाकं न दोसो अमतन्तले ।
यथा अरीहि परिरुद्धो विज्जन्ते गमने पथे ;
न पलायति सो पुरिसो न दोसो अञ्जसस्स सो ।
एवं किले सपरिरुद्धो विज्जमाने सिवं पथे ;
न गवेसति तं मग्ग न दोसो सिवमञ्जसे ।
यथापि व्याधितो पुरिसो विज्जमाने तिकिच्छके ,
न तिकिच्छापेति त व्याधि न सो दोसो तिकिच्छके ।
एव किलेसव्याधीहि दुक्खितो परिपीलितो ,
न गवेसति त आचरिय न सो दोसो विनायकेति ।

दसरथजातकं

अतीते बाराणसियं दसरथमहाराजा नाम अगतिगमनं पहाय धम्मेन रज्जं कारेसि । तस्स सोळसन्नं इत्थिसहस्सान जेट्ठिका अग्गमहेसी द्वे पुत्ते एकं च धीतरं विजायि । जेट्ठपुत्तो रामपण्डितो नाम अहोसि, दुतियो लक्खणकुमारो नाम, धीता सीतादेवी नाम ।

अपरभागे अग्गमहेसी कालं अकासि । राजा तस्सा कालकताय चिरं सोकवसं गन्त्वा अमच्चेहि सञ्ञापितो तस्सा कत्तब्बपरिहारं कत्वा अञ्ञं अग्गमहेसिट्ठाने ठपेसि । सा रञ्ञो पिया अहोसि मनापा । सापि अपरभागे गब्भं गण्हित्वा लद्धगब्भपरिहारा पुत्तं विजायि, भरतकुमारो तिस्स नाम करिंसु । राजा पुत्तसिनेहेन 'भद्दे वरं ते दम्मि, गण्हाहीति' आह । सा गहितकं कत्वा ठपेत्वा कुमारस्स सत्तट्ठवस्स-काले राजानं उपसङ्कमित्वा 'देव, तुम्हेहि मय्हं पुत्तस्स वरो दिन्नो, इदानिस्स न देथाति' आह । 'गण्ह भद्दे ति ।' 'देव, पुत्तस्स मे रज्जं देथाति ।'

राजा अच्छरं पहरित्वा 'नस्स वसलि । मय्हं द्वे पुत्ता अग्गिक्खन्धा विय जलन्ति ते मारापेत्वा तव पुत्तस्स रज्जं याचसीति' तज्जेसि । सा भीता सिरिगब्भं पविसित्वा अञ्ञेसु दिवसेसु राजानं पुनप्पुनं रज्ज-मेव याचि । राजा तस्सा तं वरं अदत्वा व चिन्तेसि—'मातुगामो नाम अकतञ्ञू मित्तदूभी, अयं मे कूटपण्णं वा कूटलञ्जं वा कत्वा पुत्ते घातापेय्याति' सो पुत्ते पक्कोसापेत्वा तं अत्थं आरोचेत्वा 'तात तुम्हाकं इध वसन्तानं अन्तरायोपि भवेय्य; तुम्हे सामन्तरज्जं वा अरञ्ञं वा गन्त्वा मम धूमकाले आगन्त्वा कुलसन्तकं रज्जं गण्हेय्या-थाति' वत्वा पुन नेमित्तके पक्कोसापेत्वा अत्तनो आयुपरिच्छेदं पुच्छित्वा 'अञ्ञानि द्वादस वस्सानि पवत्तिस्सतीति' सुत्वा 'तात इतो द्वादसवस्सच्चयेन आगन्त्वा छत्तं उस्सापेय्याथाति' आह । ते 'साधू-ति वत्वा पितरं वन्दित्वा रोदन्ता पासादा ओतरिंसु । सीतादेवी 'अहम्पि भातिकेहि सद्धिं गमिस्सामीति' पितरं वन्दित्वा रोदन्ती निक्खमि । ते तयोपि महाजनपरिवारा निक्खमित्वा महाजनं निव-त्तेत्वा अनुपुब्बेन हिमवन्तं पविसित्वा सम्पन्नोदके सुलभफलाफले पदेसे अस्समं मापेत्वा फलाफलेन यापेन्ता वसिंसु । लक्खणपण्डितो च सीता च रामपण्डितं याचित्वा 'तुम्हे अम्हाकं पितिट्ठाने ठिता, तस्मा

अस्समे येव होथ, मय फलाफल आहरित्वा तुम्हे पोसेस्सामाति' पटिञ्ञं गण्हिंसु। ततो पट्ठाय रामपण्डितो तत्थेव होति, इतरे फलाफल आहरित्वा तं पटिजग्गिंसु। एवं तेस फलाफलेन यापेत्वा वसन्तानं दसरथमहाराजा पुत्तसोकेन नवमे संवच्छरे कालं अकासि। तस्स सरीरकिच्चं करित्वा देवी अत्तनो पुत्तस्स भरतकुमारस्स 'छत्त उस्सापेथाति' आह। अमच्चा पन 'छत्तसामिका अरञ्ञे वसन्तीति' न अदसु। भरतकुमारो 'मम मातरं रामपण्डितं अरञ्ञा आनेत्वा छत्तं उस्सापेस्सामीति' पञ्चराजककुधभण्डानि गहेत्वा चतुरङ्गिनिया सेनाय तस्स वसनट्ठानं पत्वा अविदूरे खन्धावारं निवासेत्वा कतिपयेहि अमाच्चेहि सद्धिं लक्खणपण्डितस्स च सीताय च अरञ्ञ गतकाले अस्समपदं पविसित्वा अस्समपदद्वारे सुट्ठ ठपित कञ्चनरूपकं विय रामपण्डित निरासङ्कं सुखनिसिन्नं उपसङ्कमित्वा वन्दित्वा एकमन्त ठितो रञ्ञो पवत्तिं आरोचेत्वा सद्धिं अमच्चेहि पादेसु पतित्वा रोदि। रामपण्डितो नेव सोचि न रोदि, इन्द्रियविकारमत्तम्पिस्स नाहोसि। भरतस्स पन रोदित्वा निसिन्नकाले सायण्हसमये इतरे द्वे फलाफले आदाय आगमिंसु। रामपण्डितो चिन्तेसि 'इमे दहरा, मय्हं विय परिग्गण्हनपञ्ञा एतेस नत्थि, सहसा 'पिता वो मतोति' वुत्ते सोकं धारेतुं असक्कोन्तानं हदयम्पि तेस फलेय्य। उपायेन ते उदकं ओतारित्वा एतं पवत्ति सावेस्सामीति।' अथ नेसं पुरतो एकं उदकट्ठानं दस्सेत्वा 'तुम्हे अतिचिरेन आगता, इदं वो, दण्डकम्म होतु—इमं उदकं ओतरित्वा तिट्ठथा—ति' उपड्ढगाथ ताव आह।

'एथ लक्खण सीता च उभो ओतरथोदकन्ति।' ते एकवचनेन ओतरित्वा अट्ठंसु। अथ नेस तं पवत्ति आरोचेन्तो सेसं उपड्ढगाथमाह—

'एवायं भरतो आह राजा दसरथो मतोति।'

ते पितु मतसासन सुत्वा व विसञ्ञा अहेसुं। पुन पि नेसं कथेसि,

पुन निमुज्जा अहेसुन्ति । एवं यावततियं निमुज्जनं कत्वा उक्खिपित्वा उदका नीहरित्वा थले निसीदापेत्वा लद्धस्सासेसु तेसु सब्बे अञ्ञमञ्ञं रोदित्वा परिदेवित्वा निसीदिंसु । तदा भरतकुमारो चिन्तेसि—'मय्हं माता लक्खणकुमारो भगिनी च सीतादेवी पितु मरणं सुत्वा सोकं सन्धारेतुं न सक्कोन्ति, रामपण्डितो पन न सोचति न परिदेवति, किन्नु खो तस्स असोचनकारणं, पुच्छिस्सामि नन्ति' सो तं पुच्छन्तो दुतियगाथमाह—

'केन रामप्पभावेन सोचितब्बं न सोचसि ,
पितरं कालकतं सुत्वा न तं पसहते दुखं ।'

अथ-स्स रामपण्डितो अत्तनो असोचनकारणं कथेन्तो

'यं न सक्का पालेतुं पोसेन लपतं बहुं ,
स किस्स विञ्ञू मेधावी अत्तानमुपतापये ।
दहरा च हि वुद्धा च ये बाला ये च पण्डिता
अड्ढा चेव दलिद्दा च सब्बे मच्चुपरायणा ।
फलानमिव पक्कानं निच्चं पपतना भयं ,
एवं जातान मच्चानं निच्चं मरणतो भयं ।
सायमेके न दिस्सन्ति पातो दिट्ठा बहुज्जना ,
पातो एके न दिस्सन्ति सायं दिट्ठा बहुज्जना ।
परिदेवयमानो चे किञ्चिदत्थमुदब्बहे ,
सम्मूळ्हो हिंसमत्तानं कयिरा चेनं विचक्खणो ।
किसो विवण्णो भवति हिंसमत्तानमत्तनो ;
न तेन पेता पालेन्ति निरत्था परिदेवना ।
यथा सरणमादित्तं वारिना परिनिब्बये ;
एवम्पि धीरो सुतवा मेधावी पण्डितो नरो ।
खिप्पमुप्पतितं सोकं वातो तूलं व धंसये ,
एकोव मच्चो अच्चेति एकोव जायते कुले ।

सञ्ञोगपरमा त्वेव सम्भोगा सब्बपाणिनं,
तस्मा हि धीरस्स बहुस्सुतस्स सम्पस्सतो लोकमिमं परञ्च,
अञ्ञाय धम्मं हदयं मनञ्च सोका महन्तापि न तापयन्ति।
सोहं दस्सञ्च मोक्खञ्च भरिस्सामि च ञातके;
सेसं सम्पालयिस्सामि किच्चमेवं विजानतोति।'

इमाहि गाथाहि अनिच्चतं पकासेसि।

परिसा इमं रामपण्डितस्स अनिच्चतापकासनं धम्मदेसनं सुत्वा निस्सोका अहोसि। ततो भरतकुमारो रामपण्डितं वन्दित्वा 'बाराणसिरज्जं पटिच्छथा—ति' आह। 'तात, लक्खणञ्च सीतादेविञ्च गहेत्वा रज्जं अनुसासथा—ति।' 'तुम्हे पन देवाति?' 'तात, मम पिता द्वादस वस्सच्चयेनागन्त्वा रज्जं करेय्यासीति' मं अवोच, अहं इदानेव गच्छन्तो तस्स वचनकरो नाम न होमि। अञ्ञानि पन तीणि वस्सानि अतिक्कमित्वा आगमिस्सामीति।' एत्तकं कालं को रज्जं कारेस्सतीति?' 'तुम्हे करोथाति।' 'न मयं कारेस्सामाति।' 'तेन हि याव मम आगमना इमा पादुका कारेस्सन्तीति' अत्तनो तिणपादुका ओमुञ्चित्वा अदासि। ते तयोपि जना पादुका गहेत्वा पण्डितं वन्दित्वा महाजनपरिवुता बाराणसिं अगमंसु। तीणि संवच्छरानि पादुका रज्जं कारेसुं। अमच्चा तिणपादुकाराजपल्लङ्के ठपेत्वा अड्डं विनिच्छिनन्ति। सचे दुब्बिनिच्छितो होति, पादुका अञ्ञमञ्ञं पटिहञ्ञन्ति, ताय सञ्ञाय पुन विनिच्छिनन्ति। सम्माविनिच्छितकाले पादुका निस्सद्दा सन्निसीदन्ति। पण्डितो तिण्णं संवच्छरानं अच्चयेन अरञ्ञा निक्खमित्वा बाराणसिनगरं पत्वा उय्यानं पविसि। तस्सागतभावं ञत्वा कुमारा अमच्चपरिवुता उय्यानं गन्त्वा सीतं अग्गमहेसिं कत्वा उभिन्नम्पि अभिसेकं करिंसु। एवं अभिसेकप्पत्तो महासत्तो अलङ्कतरथे ठत्वा महन्तेन परिवारेन नगरं पविसित्वा पदक्खिणं कत्वा सुचन्दकपासादवरस्स महातलं अभिरुय्ह ततो पट्ठाय सोळसवस्ससहस्सानि धम्मेन रज्जं कारेत्वा सग्गपदं पूरेसि।

दसवस्ससहस्सानि सट्ठिवस्ससतानि च,
कम्बुगीवो महाबाहु राजा रज्जमकारयीति ।

राजोवादजातक

अतीते वाराणसियं ब्रह्मदत्ते रज्जं कारेन्ते बोधिसत्तो तस्स अग्ग-महेसिया कुच्छिस्मिं पटिसन्धिं गहेत्वा लद्धगब्भपरिहारो सोत्थिना मातुकुच्छिम्हा निक्खमि । नामगहणदिवसे पनस्स ब्रह्मदत्तकुमारो त्वेव नाम अकंसु । सो अनुपुब्बेन वयप्पत्तो सोळसवस्सकाले तक्कसिलं गन्त्वा सब्बसिप्पेसु निप्फत्तिं पत्वा पितु अच्चयेन रज्जे पतिट्ठाय धम्मेन समेन रज्जं कारेसि, छन्दादिवसेन अगन्त्वा विनिच्छयं अनुसासि । तस्मिं एवं धम्मेन रज्जं कारेन्ते अमच्चापि धम्मेनेव वोहारं विनि-च्छिनिंसु, वोहारेसु धम्मेन विनिच्छियमानेसु कूटड्डकारका नाम नाहेसुं । तेसं अभावा अड्डत्थाय राजङ्गणे उपरवो पच्छिज्जि । अमच्चा दिवसं पि विनिच्छयट्ठाने निसीदित्वा कञ्चि विनिच्छयत्थाय आगच्छन्तं अदिस्वा पक्कमन्ति । विनिच्छयट्ठानं छड्डेतब्बभावं पापुणि । बोधिसत्तो चिन्तेसि: "मयि धम्मेन रज्जं कारेन्ते विनिच्छयं आगच्छन्ता नाम नत्थि, उपरवो पच्छिज्जि । विनिच्छयट्ठानं छड्डेतब्बभावं पत्तं, इदानि मया अत्तनो अगुणं परियेसितुं वट्टति, 'अयं नाम मे अगुणो' ति सुत्वा तं पहाय गुणेसु येव वत्तिस्सामी" ति । ततो पट्ठाय "अत्थि नु खो मे कोचि अगुणवादी" ति परिगण्हन्तो अन्तो वलञ्जकानं अन्तरे कञ्चि अगुणवादिं अदिस्वा अत्तनो गुणकथमेव सुत्वा 'एते मय्हं भयेनापि अगुणं अवत्वा गुणमेव वदन्ती' ति बहि-वलञ्जनके परिग्गण्हन्तो तत्रापि अदिस्वा अन्तोनगरं परिग्गण्हि, बहिनगरे चतुसु द्वारेसु द्वारगामके परिग्गण्हि । तत्थापि कञ्चि अगुण-वादिं अदिस्वा अत्तनो गुणकथमेव सुत्वा 'जनपदं परिग्गण्हिस्सा-मीति' अमच्चे रज्जं पटिच्छापेत्वा रथं आरुय्ह सारथिमेव गहेत्वा अञ्ञातकवेसेन नगरा निक्खमित्वा जनपदं परिग्गण्हमानो याव

पच्चन्तभूमि गन्त्वा कञ्चि अगुणवादिं अदिस्वा अत्तनो गुणकथमेव सुत्वा पच्चन्तसीमतो महामग्गेन नगराभिमुखो येव निवत्ति। तस्मि पनकाले मल्लिको नाम कोसलराजापि धम्मेन रज्जं कारेन्तो अगुणगवेसको हुत्वा अन्तोवलञ्जकादिसु अगुणवादिं अदिस्वा अत्तनो गुणकथमेव सुत्वा जनपदं परिगण्हन्तो त पदेस अगमासि। ते उभो पि एकस्मिं निन्ने सकटमग्गे अभिमुखा अहेसुं। रथस्स उक्कमनट्ठानं नत्थि। अथ मल्लिकरञ्ञो सारथि वाराणसिरञ्ञो सारथिं 'तव रथं उक्कमापेहीति' आह। सोपि 'अम्भो सारथि तव रथं उक्कमापेहि, इमिस्मिं रथे वाराणसिरज्जसामिको ब्रह्मदत्त महाराजा निसिन्नोति' आह। इतरोपि 'अम्भो सारथि इमस्मिं रथे कोसलरज्जसामिको मल्लिकमहाराजा निसिन्नो, तव रथं उक्कमापेत्वा अम्हाकं रञ्ञो रथस्स ओकासं देहीति' आह। वाराणसि रञ्ञो सारथि 'अयं पि किर राजा येव किन्नु खो कातब्बंति चिन्तेतो' 'अत्थेस उपायोः वयं पुच्छित्वा दहरतरस्स रथं उक्कमापेत्वा महल्लकस्स ओकासं दापेस्सामीति' सन्निट्ठानं कत्वा त सारथि कोसलरञ्ञो वयं पुच्छित्वा परिगण्हन्तो उभिन्नम्पि समानवयभाव ञत्वा रज्जपरिमाणं बलं धनं यसं जाति गोत्त-कुलापदेसं ति सब्ब पुच्छित्वा 'उभोपि तियोजन-मतिकस्स रज्जस्स सामिनो समान बल धन यस जाति गोत्त कुलापदेसाति' ञत्वा सीलवन्ततरस्स ओकास दस्सामीति चिन्तेत्वा सो सारथि 'तुम्हाकं रञ्ञो सीलाचारो कीदिसो' ति पुच्छि। सो 'अय च अय च अम्हाकं रञ्ञो सीलाचारोति' अत्तनो रञ्ञो अगुणमेव गुणतो पकासेन्तो पठमं गाथमाह—

दळ्हं दळ्हस्स खिपति मल्लिको मुदुना मुदुं;
साधुम्पि साधुना जेति असाधुम्पि असाधुना।
एतादिसो अयं राजा मग्गा उय्याहि सारथीति।

तत्थ दळ्हं दळ्हस्स खिपतीति—या दळ्हो होति बलवदटेन पहारेन वा वचनेन वा जिनितब्बो तस्स दळ्हमेव पहारं वा वचन वा खिपति एवं

दळ्हो हुत्वा त जिनातीति दस्सेति, मल्लिकोति तस्स रञ्ञो नाम, मुदुना मुदुन्ति, मुदुपुग्गल सयम्पि मुदु हुत्वा मुदुनाव उपायेन जिनाति। साधुम्पि साधुना जेति असाधुम्पि असाधुना ति ये साधु सप्पुरिसा तं सयम्पि साधु हुत्वा साधुनाव उपायेन, ये पन असाधु, ते सयम्पि असाधु हुत्वा असाधुनाव उपायेन जिनातीति दस्सेति, एतादिसो अयं राजा ति अयं अम्हाकं कोसलराजा सीलाचारेन एवरूपो, मग्गा उय्याहि सारथीति अत्तनो रथं मग्गा उक्कमापेत्वा उय्याहि-उप्पथेन याहीति अम्हाकं रञ्ञो मग्गं देहीति वदति।

अथ तं बाराणसिरञ्ञो सारथि 'अम्भो, किं पन तया अत्तनो रञ्ञो गुणा कथिता' ति वत्वा 'आमाति' वुत्ते यदि एते गुणा अगुणा पन कीदिसाति वत्वा 'एते ताव अगुणा होन्तु, तुम्हाकं पन रञ्ञो कीदिसा गुणा' ति वुत्ते 'तेन हि सुणाहीति' दुतियं गाथमाह—

अक्कोधेन जिने कोधं असाधुं साधुना जिने,
जिने कदरियं दानेन सच्चेनालीकवादिनं।
एतादिसो अयं राजा मग्गा उय्याहि सारथीति।

तत्थ एतादिसो ति एतेहि अक्कोधेन जिने कोधन्ति आदिवसेन वुत्तेहि गुणेहि समन्नागतो, अयं हि कुद्धं पुग्गलं सयं अक्कोधो हुत्वा अक्कोधेन जिनाति, असाधुं पन सयं साधु हुत्वा साधुना, कदरियं थद्धमच्छरिं सयं दायको हुत्वा दानेन, अलीकवादिं मुसावादिं सयं सच्चवादी हुत्वा सच्चेन जिनाति; मग्गा उय्याहीति सम्म सारथि मग्गतो अपगच्छ एवं-विधसीलाचारगुणयुत्तस्स अम्हाकं रञ्ञो मग्गं देहीति अम्हाकं राजा मग्गस्स अनुच्छविकोति।

एवं वुत्ते मल्लिकराजा च सारथि च उभोपि रथा ओतरित्वा अस्से मोचेत्वा रथं अपनेत्वा बाराणसिरञ्ञो मग्गं अदंसु। बाराणसिराजा मल्लिकरञ्ञो नाम 'इदञ्च इदञ्च कातुं वट्टतीति' ओवादं दत्वा बाराणसिं गन्त्वा दानादीनि पुञ्ञानि कत्वा जीवितपरियोसाने सग्गपदं

पूरेसि। मल्लिकराजापि तस्स ओवाद गहेत्वा जनपद परिग्गहेत्वा अत्तनो अगुणवादि अदिस्वा व सकनगर गन्त्वा दानादीनि पुञ्ञानि कत्वा जीवितपरियोसाने सग्गपदमेव पूरेसि।

महोसधस्स आवाहो

ततो पट्ठाय बोधिसत्तस्स यसो महा अहोसि। तं सब्ब उदुम्बरा देवी येव विचारेति, सा तस्स सोलसवस्सकाले चिन्तेसि: "मम कनिट्ठो महल्लको जातो, यसोपिस्स महा, आवाहमस्स कातुं वट्टतीत," सा रञ्ञो तमत्थ आरोचेसि, राजा त सुत्वा सोमनस्सप्पत्तो हुत्वा "साधु, जानापेहि नित्' ति आह, सा त जानापेत्वा तेन सम्पटिच्छिते "तेन हि तात कुमारिक आनेमो" ति आह, महोसधो 'कदाचि इमेहि आनीता मम न रुचेय्य, सयमेव ताव उप· रेमीति' चिन्तेत्वा एवमाह: 'देवि कतिपाह मा किञ्चि रञ्ञो वदेथ, अहं एक दारिकं मयं परियेसित्वा मम चित्तरुचितं तुम्हाकं आचिक्खिस्सामीति' "एवं करोहि ताता" ति,

सो देविं वन्दित्वा अत्तनो घर गन्त्वा सहायकानं सञ्ञ अदत्वा अञ्ञतरवेसेन तुन्नवायउपकरणान गहेत्वा एकको व उत्तरद्वारेन निक्खमित्वा उत्तरद्वारयवमज्झकं पायासि। तदा पन तत्थ पुराणसेट्ठिकुलं परिजिण्णं अहोसि, तस्स कुलस्स धीता अमरादेवी नाम अभिरूपा सब्बलक्खणसम्पन्ना पुञ्ञवती सा त दिवस पातो व यागुं पचित्वा आदाय 'पितु कसनट्ठानं गमिस्सामीति, निक्खमित्वा तमेव मग्गं पटिपज्जि। महासत्तो त आगच्छन्तिं दिस्वा लक्खणसम्पन्ना इत्थी, स चे अपरिग्गहा इमाय मे पादपरिचारिकाय भवितुं वट्टतीत चिन्तेसि। सापि तं दिस्वा व 'स चे एवरूपस्स पुरिसस्स गेहे भवेय्य सक्का सिया कुटुम्बं सण्ठपेतुन्' ति चिन्तेसि, अथ महासत्तो 'इमिस्सा सपरिग्गह-अपरिग्गहभाव न जानामि, हत्थमुद्दाय न पुच्छिस्सामि, सचे पण्डिता भविस्सति' जानिस्सतीत' चिन्तेन्तो दूरे ठितोव मुट्ठिं अकासि सा 'अयं मे सस्सामिकभावं पुच्छतीति' ञत्वा हत्थं विकासेसि। सो ञत्वा

समीप गन्त्वा 'भद्दे, का नाम त्वन्' ति पुच्छि 'सामि, अहं अतीतानागते वा एतरहि वा य नत्थि तं नामिका' ति भद्दे, लोके अमरन्नाम नत्थि, त्व अमरा नाम भविस्ससीति 'एवं सामीति' 'भद्दे, कस्स यागुं हरसीति' 'सामि, पुब्बदेवताया' ति 'पुब्बदेवता नाम माता पितरो, तव पितु हरिस्ससि मञ्ञे' ति 'एव भविस्सति सामीति' तव पिता किं करोतीति' 'एकं द्वे करोतीति,' 'एकस्स द्विधाकरणं नाम कस्सनं, कसति भद्दे' ति 'एव सामीति,' 'कस्मिं पन ठाने ते पिता कसतीति' 'यत्थ सकिं गता न येन्तीति,' 'सकिं गतान न पच्चागमनट्ठान नाम सुसान, सुसानसन्तिके कसति भद्दे' ति, 'एव सामाति,' 'भद्दे, अज्जेव एस्ससीति' स चे एस्सति न एस्सामि, नो चे एस्सति एस्सामीति 'भद्दे, पिता ते मञ्ञे नदीपारे कसति, उदके एन्ते न एस्सामि, अनेन्ते एस्सामीति' 'एव सामीति,' एत्तक अल्लापसल्लाप कत्वा अमरादेवी 'यागुं पिविस्ससि सामीति', निमन्तेसि। महासत्तो पाटिविलपन नाम अमङ्गलन्ति चिन्तेत्वा 'आम, पिविस्सामीति' आह सा यागुघट ओतारेसि। महासत्तो 'सचे पाति अधोवित्वा हत्थधोवन अदत्वा व दस्सति एत्थेव न पहाय गमिस्सामीति' चिन्तेसि। सा पन पातिया उदकं आहरित्वा हत्थधोवन दत्वा तुच्छपातिं हत्थे अठपेत्वा भूमियं ठपेत्वा घट आलोलेत्वा यागुया पूरेसि, तत्थ पन सित्थानि मन्दानि, अथ न महासत्तो आह, 'किं भद्दे अति बहला यागू' ति, 'उदकं न लद्ध सामीति' 'केदारेहि उदकं न लद्धं भविस्सति मञ्ञे' ति, सा 'एवं सामीति' 'पितु यागुं ठपेत्वा बोधिसत्तस्स अदासि, सो पिवित्वा मुखं विक्खालेत्वा 'भद्दे, मय तुम्हाकं गेहं गमिस्साम, मग्गं नो आचिक्खाति' आह, सा 'साधू' ति वत्वा तस्स मग्गं आचिक्खित्वा पितु यागुं गहेत्वा अगमासि।

सो ताय कथितमग्गेन तं गेहं गतो, अथ नं अमरादेविया माता दिस्वा व आसन दत्वा 'यागुं वड्ढेमि सामीति' आह। 'अम्म,

कनिट्ठभगिनिया मे अमरादेविया थोका यागु दिन्ना' ति, सा 'धीतु मे अत्थाय आगतेन भवितब्बं' ति अञ्ञासि। महासत्तो तेसं दुग्गतभाव जानन्तोपि 'अम्म, अहं तुन्नवायो, अत्थि किञ्चि सिब्बितब्बन्' ति, 'सामि, अत्थि, मूलं पर नत्थीति'। 'अम्म, मूलेन कम्मं नत्थि, आनेथ, सिब्बिस्सामीति' सा जिण्णकानि पिलोतकानि आहरित्वा अदासि, बोधिसत्तो आहटाहटं निट्ठपेसि येव, पञ्ञवन्तान किरिया नाम इज्झति। अथ नं 'अम्म, वीथिसभागान आरोचेहीति' आह, सा सकलगामे आरोचेसि। महासत्तो तुन्नकम्म कत्वा एकाहेनेव सहस्स उप्पादेसि। महल्लिकापि स्स पातरासभत्त पचित्वा दत्वा सायं 'तात-कित्तक पचामीति' आह। 'अम्म, यत्तका इमस्मिं गेहे भुञ्जन्ति तस पमाणेना' ति, सा अनेकसूपब्यञ्जन बहुभत्तं पचि।

अमरादेवी पि सायं सीसेन दारुकलाप उच्छगेन पण्ण आदाय अरञ्ञतो आगन्त्वा पुरे द्वारे दारूनि निक्खिपित्वा पच्छिमद्वारेन गेह पाविसि। पिता पनस्सा सायतर आगमि। महासत्तो न नगर-सेपि भुञ्जि, इतरा मातापितरो भोजेत्वा पच्छा भुञ्जित्वा माता-पितुन्नं पादे धोवित्वा महासत्तस्स पादे धोवि। सो त परिगण्हन्तो कतिपाहं तत्थेव वसि। अथ नं वीमसन्तो एकदिवस आह: 'भद्दे अमरादेवि, अड्ढनालिकमत्तं तण्डुलं गहेत्वा ततो मय्ह यागुञ्च पूवञ्च भत्तञ्च पचाहीति'। सा 'साधू' ति सम्पटिच्छित्वा ते तण्डुले कोट्टेत्वा मूलतण्डुलेहि यागुं मज्झिमतण्डुलेहि भत्तं कणिकाहि पूवं पचित्वा तदनुरूपं ब्यञ्जनं सम्पादेत्वा महासत्तस्स सब्यञ्जनं यागुं अदासि। यागु मुखे ठापितमत्ताव रसहरणियो फरित्वा अट्ठासि। सो तस्सा वीमस-नत्थमेव 'भद्दे, पचितुं अजानन्ती किमत्थं मम तण्डुले नासेसीति' यागुं सह खेळेन निट्ठुभित्वा भूमियं पातेसि, सा अकुज्झित्वा व 'सचे यागु न सुन्दरा पूवं खाद सामीति' पूव अदासि। तम्पि तथेव अकासि। भत्तं पि तथेव पटिपज्जित्वा 'त्वं पचितुं अजानन्ती मम सन्तकं किमत्थ

नामेसीति' कुद्धो विय तीणि पि एकतो मद्दित्वा तम्मा सीसतो पट्ठाय सकलसरीरं विलिम्पित्वा 'द्वारे निसीदाति' आह। सा अकुज्झित्वा व 'साधु सामीति' तथा अकासि। सो तस्सा निद्दतमानभाव ञत्वा 'भद्दे एहीति' आह। सा एकवचनेनेव आगता।

महासत्तो पन आगच्छन्तो कहापणसहस्सेन सद्धि एकं साटकं तम्बूल-पसिब्बके ठपेत्वा आगतो। अथ सो तं साटकं नीहरित्वा तस्सा हत्थे ठपेत्वा 'भद्दे तव सहायिकाहि सद्धिं नहायित्वा इमं साटकं निवासेत्वा एहीति' आह। सा तथा अकासि। पण्डितो उप्पादितधनञ्च आहटधनञ्च सब्बं तस्सा मातापितुन्नं दत्वा ते समस्सासेत्वा तं आदाय नगरमेव गन्त्वा वीमंसनत्थाय तं दोवारिकस्स गेहे निसीदा-पेत्वा दोवारिकभरियाय आचिक्खित्वा अत्तनो निवेसनं गन्त्वा पुरिसे आमन्तेत्वा 'असुकगेहे इत्थि ठपेत्वा आगतो' म्हि, इमं सहस्सं आदाय गन्त्वा तं वीमंसथा ति सहस्सं दत्वा पेसेसि। ते तथा करिंसु। सा 'इमं मम सामिकस्स पादरजं न अग्घताति न' इच्छि। ते गन्त्वा पण्डितस्स आरोचेसुं। पुनपि यावततियं पेसेत्वा चतुत्थं वारे 'तेन हि तं हत्थे गहेत्वा कड्ढन्ता आनेथा' ति आह। ते तथा करिंसु। सा महा-सत्तं महासम्पत्तियं ठितं न सञ्जानि, ओलोकेत्वा च पन हसि चेव रोदि च। सो उभिन्नम्पि कारणं पुच्छि। अथ नं सा एवमाह 'सामि अहं हस-माना तवसम्पत्तिं ओलोकेत्वा 'अयं सम्पत्ति न अकारणेन लद्धा, पुरिम-भवे पन कुसलं कत्वा लद्धा भविस्सतीति अहो पुञ्ञानं फलं नामाति हसिं, रोदमाना पन इदानि परस्स रक्खितगोपितवत्थुम्हि अप-रज्झित्वा निरयं गमिस्सतीति तयि कारुञ्ञेन रोदिं' ति। सो तं वीमंसित्वा सुद्धभावं ञत्वा 'गच्छथ, नं तत्थेव नेथा' ति वत्वा पेसेत्वा पुन तुन्नवायवेसं गहेत्वा गन्त्वा ताय सद्धिं तं रत्तिं वसित्वा पुनदिवसे पातो व राजकुलं पविसित्वा उदुम्बरा देविया आरोचेसि। सा रञ्ञो आरोचेत्वा अमरादेविं सब्बालङ्कारेहि अलंकरित्वा महायोग्गे निसी दा-

पेत्वा महन्तेन सक्कारेन महासत्तस्य गेहं आनेत्वा मङ्गल कारेसि। राजा बोधिसत्तस्स सहस्समूलं पण्णाकार पेसेसि। दोवारिके आदिं कत्वा सकलनगरवासिनो पण्णाकारे पहिणिंसु। अमरादेवी रञ्ञा पहितं पण्णाकारं द्विधा भिन्दित्वा एकं कोट्ठास रञ्ञ पेसेसि। एतेनुपायेन सकलनगरवासीनम्पि पण्णाकार पेसेत्वा नगरं संगण्हि। ततो पट्ठाय महासत्तो ताय सद्धिं समग्गवासं वसन्तो रञ्ञो अत्थञ्च धम्मञ्च अनुसासि।

महोसधस्स विनिच्छयो

एका इत्थी पुत्तं आदाय मुखधोवनत्थाय पण्डितस्स पोक्खरणिं गन्त्वा पुत्त नहापेत्वा अत्तनो साटके निसीदापेत्वा मुख धोवित्वा नहायितुं ओतरि। तस्मिं खणे एका यक्खिनी न दारक दिस्वा खादितुकामा हुत्वा इत्थिवेसं गहेत्वा 'सहायिके, सोभति वताय दारको, तवेसो पुत्तो' ति पुच्छित्वा 'आम, अम्मा' ति वुत्ते 'पायेमि नन्' ति वत्वा 'पायेही' ति वुत्ता तं गहेत्वा थोकं कीलापेत्वा तं आदाय पलायितुं आरभि। इतरा तं दिस्वा धावित्वा 'कुहिं मे पुत्त नेसी' ति गण्हि। यक्खिनी 'कुतो तया पुत्तो लद्धो, ममेसो पुत्तो' ति आह। ता कलहं करोन्तियो सालद्वारेन गच्छन्ति। पण्डितो कलहसद्दं सुत्वा ता पक्कोसित्वा 'किमेतन्' ति पुच्छित्वा अट्ट सुत्वा अक्खीनं अनिमिसताय चेव रत्तताय च यक्खिनिं यक्खिनीति ञत्वापि 'मम विनिच्छये ठस्सथा' ति वत्वा 'आम ठस्साम' ति वुत्ते लेखं कड्ढित्वा लेखामज्झे दारक निपज्जापेत्वा, यक्खिनिया हत्थेसु मातरं पादेसु गाहापेत्वा 'द्वेपि आकड्ढित्वा गण्हथ, कड्ढितुं सक्कोन्तिया एव पुत्तो' ति आह। ता उभोपि कड्ढिंसु। दारको कड्ढियमानो दुक्खप्पत्तो हुत्वा विरवि। माता हदयेन फलितेन विय पुत्तं मोचेत्वा रोदमाना अट्ठासि। पण्डितो महाजनं पुच्छि 'दारके मातुहदय मुदुकं होति उदाहु अमातुहदयन्' ति। 'मातुहदयं पण्डिता' ति। 'इदानि किमेतं दारकं गहेत्वा ठिता माता होति विसज्जेत्वा ठिता' ति। 'विसज्जेत्वा ठिता पण्डिता' ति। 'इम पन दारकं

चोरि तुम्हे जानाथा' ति । 'न जानाम पण्डिता' ति । 'यक्खिनी एसा, दारकं खादितुं गण्हि' ति । 'कथ जानामि पण्डिता' ति । 'अक्खीन अनिमिसताय चेव रत्तताय च छायाय अभावेन च निब्भयताय च निक्करुणताय चा,' ति । अथ न पुच्छि 'कासि त्वन्' ति । 'यक्खिनीम्हि सामी' ति । 'कस्मा इम दारक गण्ही' ति । 'खादितुं सामी' ति । 'अन्धबाले, पुब्बेपि पापक कत्वा यक्खिनी जातासि इदानि पुनपि पाप करोसि, अहो अन्धबालासी' ति ओवदित्वा पञ्चसु सीलेसु पतिट्ठापेत्वा उय्योजेसि । दारकमाता 'चिरजीव सामी' ति पण्डित थोमेत्वा पुत्त आदाय पक्कामि ।

चुल्लकसेट्ठि

अतीते कासि रट्ठे बाराणसिय ब्रह्मदत्ते रज्ज कारेन्ते बोधिसत्तो सेट्ठि-कुले निब्बत्तित्वा वयप्पत्तो सेट्ठिट्ठान लभित्वा चुल्लकसेट्ठि नाम अहासि सो पण्डितो ब्यत्तो सब्बनिमित्तानि जानाति । सो एकदिवसं राजूपट्ठान गच्छन्तो अन्तरवीथिय मतमूसिक दिस्वा त खणे नक्खत्त समानेत्वा इदमाह. 'सक्का चक्खुमता कुलपुत्तेन इम उन्दुर गहेत्वा दाराभरण वा कातुं कम्मन्ते च पयोजेतुन्' ति । अञ्ञतरो दुग्गत-कुलपुत्तो त सेट्ठिस्स वचनं सुत्वा नाय अजानित्वा कथेस्सती' ति, मूसिक गहेत्वा एकस्मिं आपणे बिडालस्सत्थाय दत्वा काकणिक लभि । ताय काकणिकाय फाणित गहेत्वा एकेन कुटेन पानीयं गण्हि । सो अरञ्ञतो आगच्छन्त मालाकारे दिस्वा थोक थोकं फाणितखण्ड दत्वा उलुंकेन पानीय ददाति । ते तस्स एकेकं पुप्फमुट्ठि अदंसु । सो तेन पुप्फमूलेन पुन-दिवसेपि फाणितञ्च पानीयघटञ्च गहेत्वा पुप्फाराममेव गतो । तस्स त दिवसं मालकारा अड्ढाचितके पुप्फगुच्छे दत्वा अगमंसु । सो नचिरस्सेव इमिना उपायेन अट्ठकहापणे लभि ।

पुन एकस्मिं वातवुट्ठिदिवसे राजुय्याने बहू सुक्खदण्डका च साखा च पलास च वातेन पतित होति । उय्यानपालो छड्डेतुं उपाय न

पस्सति। सो तत्थ गन्त्वा 'स चे इमानि दारुपण्णानि मय्हं दस्ससि अहन्ते इमानि सब्बानि नीहरिस्सामी' ति उय्यानपालमाह। सो 'गण्ह अय्या' ति सम्पटिच्छि। चुल्लन्तेवासिको दारकानं केलिमण्डल गन्त्वा फाणितं दत्वा मुहुत्तेन सब्बानि दारुपण्णानि नीहरापेत्वा उय्यानद्वारे रासिं कारेसि। तदा राजकुम्भकारो राजकुलान भाजनानं पचनत्थाय दारूनि परियेसमानो उय्यानद्वारे तानि दिस्वा तस्स हत्थतो विक्किणित्वा गण्हि। त दिवस चुल्लन्तेवासिको दारुविक्कयेन सोळस कहापणे चाटिआदीनि च पञ्च भाजनानि लभि। सो चतुवीसतिया कहापणेसु जातेसु 'अत्थि अय उपायो मय्हन्' ति नगरद्वारतो अविदूरट्ठाने एक पानीयचाटिं ठपेत्वा पञ्चसते तिणहारके पानीयेन उपट्ठहि। ते आहंसुः 'त्वं सम्म अम्हाक बहूपकारो, किन्ते करोमा' ति। सो 'मय्हं किच्चे उप्पन्ने करिस्सथा' ति वत्वा इतो चितो च विचरन्तो थलपथकम्मिकेन च जलपथकम्मिकेन च सद्धिं मित्तसन्थव अकासि। तस्स थलपथकम्मिको 'स्वे इम नगर अस्स वाणिजको पञ्च अस्ससतानि गहेत्वा आगमिस्सती' ति आचिक्खि। सो तस्स वचन सुत्वा तिणहारके आह 'अज्ज मय्हं एकेक तिणकलाप देथ, मया च तिणे अविक्कीते अत्तनो तिणं मा विक्किणथा' ति। ते 'साधू' ति सम्पटिच्छित्वा पञ्च तिणकलाप सतानि आहरित्वा तस्स घरे पातयिंसु। अस्सवाणिजो सकलनगरे अस्सान तिणं अलभित्वा तस्स सहस्सं दत्वा तं तिण गण्हि। ततो कतिपाहच्चयेन तस्स जलपथकम्मिकसहायको आरोचेसिः 'पट्टन महानावा आगता' ति। सो 'अत्थि अय उपायो' ति अट्ठहि कहापणेहि सब्बपरिवारसम्पन्नं तावकालिक रथ गहेत्वा महन्तेन यसेन नावा पट्टन गन्त्वा एकं अङ्गुलिमुद्दिकनावा सच्चकार दत्वा अविदूरट्ठाने साणिं परिक्खिपापेत्वा निसिन्नो पुरिसे आणापेसिः 'बाहिरतो वाणिजेसु आगतेसु ततियेन पाटिहारेन आरोचेथा' ति। 'नावा आगता' ति सुत्वा बाराणसितो सतमत्ता वाणिजा 'भण्डं गण्हामा' ति अगमिंसु।

'भण्डं तुम्हे न लभिस्सथ, असुकट्ठाने नाम महावाणिजेन सच्चकारो दिन्नो' ति। ते तं सुत्वा तस्स सन्तिकं आगता। पादमूलिकपुरिसा पुरिससञ्ञातसेन ततियेन पाटिहारेन तेसं आगतभाव आरोचेसुं। तं सत-मत्तापि वाणिजा एकेकं सहस्सं दत्वा तेन सद्धिं नावाय पत्तिका हुत्वा पुन एकेकं सहस्सं दत्वा पत्तिं विसज्जापेत्वा भण्डं अत्तनो सन्तकं अकंसु। चुल्लन्तेवासिको द्वे सतसहस्सानि गाहेत्वा बाराणसिं आगन्त्वा 'कतञ्ञुना भवितुं वट्टती' ति एकं सतसहस्सं गाहापेत्वा चुल्लकसेट्ठिस्स समीपं गतो। अथ नं सेट्ठि 'किन्ते तात कत्वा इदं धनं लद्धन्' ति पुच्छि। सो 'तुम्हेहि कथितउपाये ठत्वा चतुमासब्भन्तरे-नेव लद्धन्' ति मतमूसिकं आदिं कत्वा सब्बं वत्थुं कथेसि। चुल्लक-महासेट्ठि तस्स वचनं सुत्वा 'न दानि एवरूपं दारकं परसन्तकं कातुं वट्टती' ति वयप्पत्तं धीतरं दत्वा सकलकुटुम्बस्स सामिकं अकासि। सो सेट्ठिनो अच्चयेन तस्मिं नगरे सेट्ठिट्ठानं लभि। बोधिसत्तोपि यथा-कम्मं अगमासि। सम्मासम्बुद्धोपि इमं धम्मदेसनं कथेत्वा अभिसम्बुद्धो व इमं गाथं कथेसि—

'अप्पकेन पि मेधावी पाभतेन विचक्खणो।
समुट्ठापेति अत्तानं अणुं अग्गीव सन्धमन्' ति।

शब्द-कोष

अ

अकतञ्ञू—अकृतज्ञ, उपकार न माननेवाला ।

अगतिगमन—कुमार्ग से चलना ।

अग्गमहेसी—अग्रमहिषी, प्रधान पटरानी ।

अट्ट—अर्थ, मुकद्दमा ।

अतिवत्तति—अतिवर्तते, अतिक्रमण करता है ।

अनवज्ज—अनवद्य, दोष रहित ।

अनुपुब्बेन—आनुपूर्व्येण, क्रमश ।

अज्झोत्थरित्वा—अध्यवस्तीर्य, तीर्ण करके ।

अन्तमसो—अन्ततः ।

अरिय—आर्य, श्रेष्ठ ।

अमुक—अमुक ।

अहोसि—अभूत्, हुआ ।

आ

आदिच्चो—आदित्य, सूर्य ।

आचरिय—आचार्यः ।

आणा—आज्ञा ।

आरक्ख—आरक्ष, रक्षा ।

आवुध—आयुध, शस्त्र ।

इ

इत्थि—स्त्री ।

इस्सर—ईश्वर ।
इदानि—इदानीम्, इस समय ।
इध—इह, यहाँ ।
इद्धि—ऋद्धि ।

उ

उक्कमन—उत्क्रमण, निकलना ।
उट्ठान—उत्थान, उठना ।
उत्तमङ्ग—उत्तमाङ्ग, सिर ।
उन्दुर—इन्दुर, मूषक ।
उप्पलं—उत्पलम्, कमल

ऊ

ऊका—यूका, जूँ ।

ए

एकमन्तं—एकान्ते, एक किनारे ।
एतादिस—एतादृश, इस प्रकार का ।
एत्तक—एतावत्, इतना ।

ओ

ओकास—अवकाश, स्थान ।
ओपरज्ज—यौवराज्य ।
ओवाद—अववाद, उपदेश ।
ओहीनक—अवहीनक, बचे हुए ।

क

कत—कृत, किया गया ।
कतिपाहं—कतिपयाहम्, कुछ दिन ।
कम्मार—कर्मार, लोहार ।
कपि—कपि ।

कातव्वो—कर्तव्यः, करने योग्य।
कारुञ्ञ—कारुण्य, दया।
कालमकासि—कालम् अकार्षीत्, मर गया।
कित्तक—कियत्, कितना।
किरिया—क्रिया।
कुच्छिस्मि—कुक्षौ, कोख में।
कुज्झति—क्रुध्यति, क्रोध करता है।
कोचि—कश्चित, कोई।
कोसिय—कौशिक, उलूक।

ख

खत्तियो—क्षत्रिय।
खन्ति—क्षान्ति, क्षमा।
खन्धावार—स्कन्धावार, सेना।
खज्जोपनक—खद्योतनक, जुगनू कीड़ा।
खिप्प—क्षिप्रम्, शीघ्र।
खीयति—क्षीयत, क्षीण होता है।
खुद्द—क्षुद्र, छोटा।

ग

गण्हि—अग्रहीत्, ग्रहण किया।
गन्त्वा—गत्वा, जाकर।
गब्भो—गर्भः।
गवेसितुं—गवेषितुं, ढूँढने के लिये।
गाहापेत्वा—ग्राहयित्वा, ग्रहण कराकर।

घ

घातापेति—घातयति, वध कराता है।
घोसेति—घोषयति, घोषणा कराता है।

च

चतूसु—चतुर्पु, चार में।
चागो—त्यागः।
चिएण—चीर्णं, विचरण किया गया।

छ

छट्ठम—षष्ठ, छठा।
छड्डापेति—छर्दयति, छुड़ाता है।
छत्त—छत्र।

ज

ञातिसुहज्जो—ज्ञातिसुहृदो, बंधु-मित्र।
जानापेत्वा—ज्ञापयित्वा, जनाकर।
जिने—जयेत्, जीते।
जिनाति—जयति, जीतता है।

झ

झायति—क्षीयते, नष्ट होता है।
झायिनो—ध्यायिनः, ध्यान करनेवाले का।

ञ

ञत्वा—ज्ञात्वा, जानकर।
ञाति—ज्ञाति, बंधु।

ठ

ठत्वा—स्थित्वा, ठहरकर।
ठपित—स्थापित, रखखा हुआ।
ठपेत्वा—स्थापयित्वा, रखकर, छोड़कर।

त

तज्जेसि—धमकाया।
तिकिच्छक—चिकित्सक, वैद्य।

तिविधग्गि—त्रिविधाग्नि, तीन प्रकार की अग्नि।
तक्खणे—तत्क्षणे, उसी समय।

थ

थम्भ—स्तंभ।
थेरो—स्थविरो, वृद्ध।

द

द्वादसवस्सच्चयेन—द्वादशवर्षात्ययेन, बारह वर्ष के बाद।
दिन्न—दत्तं, दिया गया।
दुग्गत—दुर्गत, दुर्गति प्राप्त।
दुम्मेधानं—दुर्मेधसाम्, दुर्बुद्धियों का।

ध

धीता—दुहिता, लड़की।
धूमकाले—धूम्रकाले, मरण समय में।

न

निप्फत्ति—निष्पत्तिम्, कुशलता।
निसिन्नकाले—निषण्णकाले, बैठने के समय।
निक्खमिंसु—निष्क्रमिषु., निकले।
नेमित्तिके—नैमित्तिकान्, निमित्त जाननेवाला को (ज्योतिषी आदि)।

प

पटिञ्ञ—प्रतिज्ञा।
पटिपक्ख—प्रतिपक्ष, विपरीत।
परियोसिते—पर्यवसिते, समाप्त होने पर।
पुग्गल—पुद्गल, जीव।
पातो—प्रातः, सवेरे।
पञ्ञा—प्रज्ञा, बुद्धि।
पहाय—प्रहाय, त्यागकर।

फ

फलित—पलितं, पका हुआ।

ब

बोधेति—बोधयति, बोध कराता है।

भ

भातिकेहि सद्धि—भ्रातृकैः सार्धम्, भाइयों के साथ।

भिज्जनाकारप्पत्ता—भेदनाकारप्राप्ता, फूटने योग्य।

म

मग्गो—मार्गः।

मच्चु—मृत्युः।

मच्छरी—मत्सरी।

मज्झिम—मध्यम।

मनापा—मनआप्या—हृदयगम।

मारापेत्वा—मारयित्वा, वध कराके।

मुसा—मृषा।

मंत्त—मंत्र।

य

यस—यशः।

याचि—अयाचिष्ट, याचना की।

र

रक्खा—रक्षा।

रट्ठं—राष्ट्रम्।

ल

लहु—लघु, क्षुद्र, हलका।

लद्धं—लब्धम्, प्राप्त हुआ।

लामकस्स—तुच्छ, क्षुद्र ।
लुद्द—रुद्र, भयंकर ।
लुद्दक—लुब्धक, बहेलिया ।

व

वस्सिकी—(देशी शब्द), चमेली ।
विरिय—वीर्यम ।
विनिच्छिनन्ति—विनिश्चिन्वन्ति, विनिश्चय करते हैं ।
विजायि—व्यजनिष्ट, उत्पन्न किया ।
विलुम्पापेति—विलोपयति, नाश कराता है ।
व्यत्तो—व्यक्तः, स्पष्ट, पण्डित के अर्थ में भी इसका प्रयोग पाया जाता है ।

स

सक्को—शक्रः, इंद्र ।
सङ्खारा—संस्कार ।
सचे—चेत्, यदि ।
सन्थव—संस्तव, परिचय ।
सरीरकिच्च—शरीरकृत्यं, शरीरसंस्कार ।
सुक्ख—शुष्क, सूखा ।
सुट्ठु—सुष्ठु, सुंदर ।
सिया—स्यात्, हो ।
सेय्यो—श्रेयः, कल्याणकर ।
संवच्छर—संवत्सर, वर्ष ।
सञ्ञा—संज्ञा ।
सञ्ञोग—संयोग ।
सत्था—शास्ता, शासन करनेवाला, यह शब्द बुद्ध भगवान् के लिये आया है ।

सद्दहानः—श्रद्धानः, श्रद्धा करनेवाला।
सावको—श्रावकः, बौद्ध-धर्म में प्रविष्ट।
सावत्थियं—श्रावस्त्यां, श्रावस्ती नाम की नगरी
सिरिगब्भ—श्रीगर्भम्, राजा का शयन-गृह।
सेट्ठी—श्रेष्ठी, सेठ।
सेय्यथा—तद्यथा।

ह

हञ्ञति—हन्यते, मारा जाता है।
हिरि—ह्रीः, लज्जा।
हेट्ठा—नीचे।

गंगा-पुस्तकमाला का १७९वाँ पुष्प

कुंडली-चक्र

[मौलिक उपन्यास]



वृंदावनलाल वर्मा